पौराणिक तीर्थ-मीमांसा

६३३
(अ-पु-६८

लेखक—
पण्डित जे० पी० चौधरी काव्यतीर्थ
भूतपूर्व कुलपति—काशी गुरुकुल
धूपचण्डी, बनारस कैण्ट।

प्रकाशक
वैदिक पुस्तकालय,
नीचीबाग, बनारस।

प्रथम संस्करण मूल्य ॥)

सन्दर्भ पु...
पु परिग्रहण क्रमांक 2865
दयानन्द महिला ...

ओ३म
गुरु विरजानन्द दण्डी
संदर्भ पुस्तकालय
दयानंद महिला महाविद्यालय
कुरुक्षेत्र
वर्गीकरण नम्बर .....
पु. परिग्रहण क्रमांक 2864

प्रकाश
वैदिक पुस्
नीचीबाग,

उच्चकोटि के सामाजिक उपन्यास

१—समाज (ले० स्व० सर आर० सी० दत्त लिखित) मूल्य २)
२—दुखी विधवा ” ” ३)
३—दुर्गेश नन्दिनी (बंकिमबाबू) २)
४—अन्नपूर्णा का मन्दिर (निरुपमा देवी) २।)

मुद्रक—
राष्ट्रभाषा मुद्रणालय,
लहरतारा, बनारस।

भौम तीर्थ समालोचना

तीर्थ क्या है, ये कैसे बन गये, पहले इसे जान लेना परम ावश्यक है। तरन्ति जना: येन। जिससे लोग तर जाते हैं। ंसार सागर के पार हो जाते हैं। उसे तीर्थ कहते हैं।

जो काशी मथुरा, प्रयाग, पुष्कर, गया, हरिद्वार को तीर्थ ानकर वहाँ पर परिश्रम से अर्जित धन का विनाश करके जल गोता लगाना ही मुक्ति का मार्ग समझ बैठे हैं वे अज्ञानी हैं। ाण ही कहता है :—

क्षालयन्तीह तीर्थानि सर्वथा देहजं मलम्।
मानसंक्षालितुं तानि न समर्थानि वैद्विज ॥

जल मय तीर्थ देह के मल को धोते हैं। मानसिक मल काम ध लोभ मोह, मद आदि को दूर करने में समर्थ नहीं है। बात बिल्कुल ठीक है। प्रत्यक्ष में ये ही बातें देखी जाती है। । तक आन्तरिक मल दूर नहीं होता है तब तक संसार से क्त नहीं हो सकती। यह सर्व तन्त्र सिद्धान्त है। आप का पुराण ही इसका समर्थन करता है।

श्लोक—श्रुतं तीर्थं पवित्रं च श्रद्धोत्पन्ना च राजसी
निर्गव स्तत्र तीर्थेवै दृष्टं चैव यथाश्रुतम्।
स्नातस्तत्र कृतं कृत्यं दत्तं दानं च राजसम्
स्थित: तत्र कियत्कालं रजोगुण समावृत:
राग द्वेषान्न निर्मुक्त: काम क्रोध समावृत:
पुनरेव गृह प्राप्तो यथा पूर्वं तथास्थित:
असूयेर्ष्या क्षमा शान्ति: पापान्येतानि नारद

श्रमेण पीड़ितं क्षेत्रं कृष्टा भूमिः सुदुर्घटा
उप्तं बीजं महार्घं च हिता वृत्ति रुदाहृता
अहो रात्रं परिक्लिष्टो रक्षार्थं फलोत्सुकः
काले सुप्तस्तु हेमन्ते बने व्याघ्रादिभिः भृशम्
भक्षितं शलभैः सर्वं निराशश्च कृतः पुनः
तद्वत्तीर्थ श्रमःपुत्र कष्टदो न फलप्रदः

तृ० स्कन्ध—देवी भा० अ० ८—ब्रह्मा नारद से कहते हैं—मैं तीर्थ को पवित्र सुना और मुझमें राजसी श्रद्धा उत्पन्न हुई। तीर्थ के लिए निकला और जैसा सुना था वैसा देखा। मैंने व स्नान किया और दान दिया. रजोगुण से युक्त कुछ काल त वहाँ ठहरा, काम क्रोध से युक्त रहा। और राग और द्वेष छुटकारा न मिला। जैसे पहले था वैसे ही फिर घर पर आया असूया ईर्ष्या अक्षमा अशान्ति आदि पाप देह से जब तक न निकलता तब तक मनुष्य पापी ही रहता है। किसी किसान परिश्रम से खेत जोता। खेत में बीज बोया खेत के चारो ब रोक लगा दी फल की आशा से रात दिन कष्ट सहन किय परन्तु समय पर सो गया और व्याघ्र आदि वन्य पशु उसे गये। इसी प्रकार हे पुत्र तीर्थ श्रम कष्ट प्रद ही है फल प्रद नहीं

श्लोक-अहिंसा सत्य मस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः
स्वधर्म पालनं राजन् सर्व तीर्थ फल प्रदम्
नित्यकर्म परित्यान् मार्गे संसर्ग दोषतः
व्यर्थं तीर्थाभिगमनं पापमेवावशिष्यते
क्षालयन्तिहि तीर्थानि सर्वथा देहजं मलम्
मानसं क्षालितुं तानि न समर्थानिवैद्विज
चित्तशुद्धिमयंतीर्थं गंगादिभ्योतिपावनम्
यदिस्याद्दैवयोगेन क्षालयन्त्यान्तरं मलम्

विशेषेण सत्संगो ज्ञाननिष्ठस्यभूपते
न वेदानचशास्त्राणि न व्रतानि तपांसिच
न मखा न च दानानिचित्तशुद्धेस्तु कारणम्

अब आगे पुराण स्वयं वैदिक मत का प्रतिपादन करता है। अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, बाहर भीतर पवित्र रहना इन्द्रियों का निग्रह करना, अपने धर्म का पालन करना सब तीर्थ फलों को देने वाला है मार्ग में नित्य कर्म के परित्याग और संसर्ग दोष से तीर्थ में जाना व्यर्थ ही है। पाप तो रही ही जाता है। तीर्थ देह के मल को साफ करते हैं मनके मैल को नहीं। गंगादि से भी पवित्र चित्त की शुद्धि करना बड़ा तीर्थ है यदि दैवयोग से ब्रह्मज्ञानियों का सत्संग हो जाय तो अलबत्ता आन्तरिक मल उससे दूर हो सकते हैं केवल स्नान से नहीं। जो लोग वेद शास्त्र पढ़ते हैं व्रत रखते हैं तप करते हैं दान देते हैं वे यदि मर्यादा का पालन नहीं करते, केवल तोता रटान करते हैं तो वे उनकी चित्त शुद्धि का साधन नहीं हो सकते। आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः। आचरण हीनको वेद पवित्र नहीं करते यदि वे उपदेश पर नहीं चलते। देवी भागवत् ६-१२

क्या आप अहंकार के वशीभूत होकर अन्याय नहीं कर हे हैं। क्या आप सत्यवक्ता हैं क्या प्राणिमात्र में आप समान बुद्धिरखते हैं, क्या राग द्वेष अपसे निकल गया है ? आप हां नहीं कह सकते। इसलिये इन उक्त वैदिक उपदेशों के अनुसार अपने आचरणों को नहीं बनाते तब तक तीर्थ जाना व्यर्थ हुआ या नहीं। इसका तात्पर्य्य यही है कि उक्त सब दोषों को दूर करने का प्रयत्न करना सबसे बड़ा तीर्थ है। यही भवसागर से पार होने के लिये मार्ग है। भौम तीर्थ नहीं।

श्लोक—यस्यहस्तौ च पादौ च मनश्चैवसुसंयतम्
विद्या तपश्च कीर्तिश्च सतीर्थफलमश्नुते
प्रतिग्रहादुपावृत्तः सन्तुष्टोयेनकेनचित्
अहंकारनिवृत्तश्चसतीर्थफलमश्नुते
अक्रोधनश्च राजेन्द्र सत्यशीलोदृढव्रतः
आत्मोपमश्च भूतेषुसतीर्थफलमश्नुते ॥

इस बात का समर्थना आपका पद्म पुराण भी करता है—सृष्टि अ०१९। वह कहता है कि जिसने अपने हाथ पैर को अधर्म में नहीं लगाया उनपर कब्जा रक्खा, चंचल मन को अपने काबू में रक्खा। किसी से दान नहीं लिया। जो कुछ भी मिला उसी में सन्तोष किया। जो अहंकार से निवृत्त हो गया हो, क्रोध रहित सत्यवक्ता, अपनी प्रतिज्ञा में दृढ़ हो और सब प्राणियों को अपनेही समान समझे वही तीर्थ फल को प्राप्त करता है। अबतीर्थों में मारे-मारे फिरने वाले अपनी छाती पर हाथ धर कर अपनेही से पूछें और अपने आचरण की स्वयं समीक्षा करें तो उन्हे स्पष्ट प्रतीत हो जायगा कि उनका तीर्थों में मुक्ति के लिये मारे मारे फिरना व्यर्थ कष्ट प्राप्ति के सिवाय और कुछ नहीं है भौम तीर्थ सापेक्ष है। अर्थात् जब तक उक्त धर्म मनुष्यों में न है तब तक भौम तीर्थ व्यर्थही है। मैं पूछता हूँ कि क्या आप हाथ पैर अधर्म में प्रवृत्त नहीं हो रहे हैं, क्या आपने अपनी इन्द्रियों को वशमें किया है, क्या आप दान नहीं लेते।

श्लोक—मानसान्यपि तीर्थानिवक्ष्यामिश्रृणुपार्थिव
येषुसम्यङ्नरः स्नात्वाप्रयाति परमांगतिम्
सत्यं तीर्थं क्षमातीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः
सर्वभूतदयातीर्थं तीर्थमार्जव मेव च

ब्रह्मचर्यं परंतीर्थं नियमस्त्तीर्थमुच्यते
मंत्राणांतुजपस्तीर्थं तीर्थं तुप्रियवादिता
ज्ञानतीर्थं धृतिस्तीर्थं अहिंसातीर्थमेवतु
आत्मतीर्थं ध्यानतीर्थं पुनस्तीर्थं शिवस्मृति: ॥१५॥
तीर्थानामुत्तमंतीर्थं विशुद्धि: मनस: पुन:
न जलाप्लुतिदेहस्य स्नानमित्यभिधीयते
सस्नातोयोदमस्नात: शुचिस्निग्धमनामत:
योलुब्धोपिशुन: क्रूरोदांभिकोविषयात्मक:
सर्वतीर्थेष्वपिस्नात: पापोमलिनएवस:
न शरीर मलत्यागान्नरोभवतिनिर्मल:
मानसेतुमलेत्यक्ते भवत्यत्यन्तनिर्मल:
जायन्ते च म्रियन्ते च जलेष्वेवजलौकस:
न च गच्छन्तिते स्वर्गम विशुद्धमनोमला:
विषयेष्वतिसंराग: मानसोमल मुच्यते
निगृहीतेन्द्रिग्रामोयत्रयत्रवसेन्नर:
तत्र तत्र कुरुक्षेत्रं नैमिषपुष्कराणि च
ज्ञानपूतेध्यानजले रागद्वेषमलापहे
य: स्नानि मानसेतीर्थेसयाति परमांगतिम् ॥ २४ ॥

पद्म पुराण उत्तरखण्ड अ० २३७, वशिष्ट दिलीप से कहते हैं हे राजन्, मैं मानस तीर्थों के नाम बतलाता हूँ इसे सुनो, जिनमें ठीक ठीक स्नान करने से मनुष्य परम गति को प्राप्त करता है।

सत्य बोलना, क्षमा करना, इन्द्रियों पर काबू रखना सब प्राणियों पर दया, ईमानदारी, सत्पात्र में दान, मन पर काबू रखना, संतोषवृत्ति ब्रह्मचर्य्य शौच सन्तोष [redacted] स्वध्याय ईश्वर चिन्तन, वेद मंत्रों का जप, प्रिय बोलना, कड़वे बचन का त्याग. ज्ञानार्जन, धैर्य्य अहिंसा, सबसे उत्तम तीर्थ चित्त शुद्धि है जलमें

डुबकी लगाने का नाम स्नान नहीं है वही स्नान करनेवाला कहा जाता है जिसने मनोनिग्रह रूप जल में स्नान किया है।

जो लालची चुगुलखोर निर्दयी मांस भक्षक पाखण्डी दम्भ करनेवाला, विषयों में आसक्त है वह सब जलमय तीर्थों में स्नान करने पर भी पापी और मलीन ही रहता है। शरीर के मल त्याग से मनुष्य निर्मल नहीं कहा जाता। मानसिक मल के त्याग से ही। वास्तव में मनुष्य निर्मल कहा जाता है। मत्स्यादि मकर कच्छपादि जलजन्तु जल में ही पैदा होते हैं और मरते हैं परन्तु वे स्वर्ग में नहीं जाते क्योंकि उनके मनका मैल बना रहता है। विषय भोग में अत्यन्त आसक्ति मानसिक मल कहलाता है। उससे जिसका विराग हो जाता है वही वास्तव में निर्मल है इन्द्रियों को निग्रह करके मनुष्य जहाँ जहाँ बास करता है वहीं वहीं कुरुक्षेत्र आदि तीर्थ वास करते है। रागद्वेष रूप मलको नाशकरने वाले ब्रह्मज्ञान से पवित्र मानस तीर्थ में जो स्नान करता है वह परमगति प्राप्त करता है।

पाठकों, उक्त उद्धरण में स्वर्ग या मुक्ति प्राप्ति के साधन बतलाये गये हैं, केवल हिन्दुओं के लिये ही नहीं सर्व संसार के लिये एक समान है। कोई भी इससे इनकार नहीं कर सकता। परमगति की प्राप्ति के येही साधन हैं। पुराण ने यहां पर सत्य का प्रतिपादन किया है। सत्य भाषण, इन्द्रिय निग्रह, गायत्री जप, ईश्वर चिन्तन अहिंसा ब्रह्मचर्य्य द्वारा चित्तकी शुद्धि ही मुक्ति के साधन हैं परन्तु इन सत्योपदेशों को त्यागकर दूसरे पुराणोंने हजार हों भौमतीर्थों की रचना कर, मिथ्या माहात्म्य लिखकर साधारण वेद-शास्त्रानभिज्ञजनता को गुमराह कर दिया है! और आज भी पुराणों के अनुयायी सनातनी इन भौमतीर्थों के झूठे माहात्म्य को वेदमंत्रों का हवाला देकर प्रचार करने में

लगे हुये हैं अत: अब पुराणों के उन मिथ्या माहात्म्यों का दिग्दर्शन कराने के पूर्व पुराणों के ही अनुसार तीर्थ निर्माण का कारण पाठकों के सामने उपस्थित कर रहा हूँ, भौमतीर्थ पवित्र क्यों माने जाते हैं उसका उत्तर सुनिये—

किसी किसी जलमें अधिक गुण होता है, जैसे गंगा आदि का जल। इनमें स्नान करने से शारीरिक मल कोढ़ खाज आदि दूर हो जाते हैं। बहराइच में जहां गाजीमियां का कब्र है जहां लाखों अज्ञानी हिन्दू जाकर अपना धन धर्म लुटाते हैं, वहां एक सूर्य्य कुण्ड था उसमें स्नान करने से शारीरिक सब ही रोग दूर होतेथे। मुसलमानों ने उस स्थानों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया परन्तु पुरानी परम्परा अब भी जारी है पर अब वह व्यर्थ है। इसी तरह मीरगंज थाने (छपरा) में एक कूआँ खोदने पर उसका पानी इतना प्रभावकारी निकला कि हजारों रोगी उस जल से रोग मुक्त हुये। ६ महीने तक उसका प्रभाव रहा। बादमें वह प्रभाव न रहा। व्याख्यान के लिये जाते समय मुझे लोगों ने उस कूप को दिखलाया था।

गंगा नदी का पानी कितना लाभदायक है इसे प्राय: सब लोग जानते हैं। गङ्गा का पानी कभी नहीं बिगड़ता वह स्वास्थ्य के लिए बड़ा ही हित कर है।

सुलतान मुहम्मद तुगलग के लिए गङ्गाजल बराबर दौलताबाद जाया करता था ऐसा इब्नबतूता अपने किताब में लिखता है अब्बुल फजल ने आइने अकबरी में लिखा है कि अकबर गङ्गा जल को अमृत समझते थे इसी प्रकार फ्रान्सीसी यात्री टैवर्नियर आदि विदेशियों ने भी गङ्गा जल की बड़ी प्रशसा की है इन्ही सब कारणों से गङ्गा पवित्र नदी मानी जाती है परन्तु हमारे पौराणिकों ने गङ्गा जल को इतना माहात्म्य दे दिया कि

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः इस सिद्धान्त को सस्ती मुक्तिमें परिणत कर दिया। गङ्गा का जल पवित्र है स्वास्थ्यवर्धक है परन्तु मुक्ति दायक नहीं। कोई भी भारतीय पण्डित इसका खण्डन कर सकता है?

देशाटन—पहले आवागमन की उतनी सुविधा न थी जैसे आजकल है। देशाटन से मनुष्य की बुद्धि का विकाश होता है। इसी उद्देश्य से उस समय तीर्थों में पैदल जानेका विधान है। ताकि लोग कूपमण्डूप न बने रहें। देशमें भ्रमण कर देश-काल का ज्ञान प्राप्त कर व्याव हारिक ज्ञान में प्रवीण बने। बैलगाड़ी पर जाने वाले के लिये तीर्थ गमन गोहत्या के समान माना जाता था प्रमाण आगे लिखा है वहीं देखियेगा। सवारी पर जाने वालों को तीर्थ फल व्यर्थ ही लिखा है.इसका उद्देश्य केवल पैदल देश भ्रमण था पर अबतो वहां जाना बिल्कुल बेकार है।

भ्रमण करने के लिए इस बीसवीं शताब्दी में सब प्रकार की सुविधायें प्राप्त हैं पर आज वे स्थान पण्डे पुजारियों के लूट के अड्डे बने हुए हैं। ये अज्ञानी जनता को हर तरह से लूटते हैं। तीर्थों में अब नवे पुण्य पुरुष रहे, न धर्मोपदेशष्टा फिर निष्प्रयोजन परिश्रमार्जित द्रव्य को व्यय कर परेशानी उठाने से काम ही क्या है। पाठक इसपर विचार करें।

जैसे शरीर के कुछ भाग यथा शिर आदि पवित्रतम माने जाते हैं इसी प्रकार पृथ्वी के कुछ भाग इसलिए पवित्र माने जाते हैं कि कहीं का पानी शरीर के खाज कोढ़ आदि को अच्छा कर देता है। कहीं पर किसी ऋषि मुनि का स्थान रहा जिस पर तप करके उन्होंने उस स्थान को पवित्र बना दिया है। अपने सदुपदेश से जनता के मानसिक मलों को दूर करके मुक्ति का मार्ग बतलाते थे इसी लिए ऐसे स्थान को तीर्थ संज्ञा हो गई है। ऐसे स्थानों पर बड़ी श्रद्धा से लोग जाते थे वहाँ उनका सदुपदेश

सुनते थे और वहाँ के जल में भी स्नान करके शारीरिक मल भी दूर करते थे। दोनों तीर्थों में स्नान करके लोग अच्छे विचार लेकर घर आते थे और उपदेश पर आचरण करके परम पद के अधिकारी बनते थे।

श्लोक—भौमानामपितीर्थानां पुण्यत्वे कारण शृणु
यथा शरीस्योद्देशा: के चिन्मेध्य तमा: स्मृता
तथा पृथिव्यामुद्देशा: केचित्पुण्यतमा स्मृता
प्रभावादद्भुताद्भूमे: सलिलस्यचतेजसा
परिग्रहान्मुनीनां च तीर्थानां पुण्यतस्मृता

जैसे शरीर के कुछ स्थान पवित्रतम कहे जाते हैं उसी प्रकार पृथ्वी के कुछ स्थान पवित्र माने जाते हैं। भूमि के अद्भुत प्रभाव से पानी के प्रभावशाली होने से मुनियों के उस स्थान पर रहने के कारण वे पवित्र तीर्थ माने गये इसलिए मानस तीर्थ में सदा स्नान करते हुए भौम तीर्थ में स्नान करने से परम गति प्राप्त होती है।

आगे धीरे धीरे इस मौलिक सिद्धान्त का व्यभिचार होने लगा मौलिक सिद्धान्त को अलग कर केवल भौमतीर्थ की महिमा गाने लगे और नये नये काल्पनिक तीर्थ की रचना जीविकार्थ करने लगे। जो माहात्म्य मानस तीर्थ का था वही माहात्म्य भौमतीर्थों का बना बना कर जनता को गुमराह करने लगे। अब भौम तीर्थों के बनाने और उनके माहात्म्य को पाठकों के सामने रखकर निर्णायार्थ आप लोगों के सामने रखता हूँ।

इसी अध्याय के १३८ श्लोक से २४० तक भौमतीर्थ की महिमा में एक कथा रचडाली। सुव्रत नामका एक विद्वान ब्राह्मण था जो पापी था। नर्मदा नदी में १० दिन तक स्नान मात्र से सात मनवन्तर स्वर्ग में वास किया फिर पृथ्वी पर ब्राह्मण के घर

जन्म लिया और प्रयाग में गया नियमके अनुसार माघस्नान किया उसके पुण्य से ब्रह्मा की सभामें जाकर एक कल्प रहा फिर पृथ्वी पर जन्म लेकर काशी में मर गया और मुक्त हो गया।

इसकथा के बनाने वाले ने कैसी अनर्गल बात नर्बदा और प्रयाग के स्नान में लिख मारी है। इसे यह बात कैसे मालूम हुई ? चारो युग हजार बार बीतने पर कल्प होता है। और एक मनुकाल बीतने पर एक मन्वन्तर होता है। अर्थात केवल दस दिन स्नान करने से ७ कल्प स्वर्ग में रहा और एक कल्प ब्रह्म लोक में रहा इसे तो वही मानेगा जिसकी बाहर और भीतर की दोनो आंख फूट गई हो। अज्ञानो जनता को विश्वास दिलाने के लिए कैसी मन गढ़न्त कथा लिख मारी।

अब आगे प्रयाग महात्म्य सुनिए :—

वाताम्बुपर्णाशन देह शोषणै स्तपोभिरुग्रैश्चिर काल संचितैः
योगैश्च संयान्ति नरास्तुयांगतिं स्नानात्प्रयागस्यहियान्तितांगतिम्
आकल्पजन्मभिःपापंसंचितंमनुजैस्तुयत्
तद्‌भवेद्भस्मसान्माघे स्नातानां तु सिता सिते

अर्थ—वायु, जल, पत्ता खाकर देह सुखाने वाले चिरकाल से संचित उग्रतपश्चर्या और योग द्वारा मनुष्य को जो गति प्राप्त होती है वह प्रयाग में स्नान मात्र स मिलती है। मनुष्य ने कल्प पर्यन्त जन्मों में जितना पाप संचित किया है वह माघ मास में त्रिवेणी संगम में स्नान करने से भस्म हो जाता है।

इन पौराणिक व्यासों ने ऐसी अनर्गल वेद विरुद्ध बातें लिख कर परम ज्ञानी वेदान्त सूत्र निर्माता व्यास के सिर पर कलंक की टीका लगायी है। और आश्चर्य तो यह है कि आजकल के पोथा धारी पण्डित भी मान रहे हैं। मानस तीर्थ के सब ही

लेखों पर पानी फेर दिया। इस गप्प का कहीं ठेकाना है।
और भी सुनिये उक्त अध्याय में —

परित्यजतिय: प्राणान् शृणुतस्यापि यत्फलम्।
षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टि वर्ष शतानि च ।। १५३ ।।
वसेत्सपितृभि: सार्धं स्वर्ग लोके विरिंचिने ।। १४४ ।।
उर्वशीसदृशीनां तुकान्तानां लभते शतम् ।
मध्ये नारी सहस्राणां बहुनांचपतिर्भवेत् ।। १४६ ।।

प्रयाग में जो अपना प्राण त्याग देता है उसका भी फल सुनिये वह ६६ हजार वर्ष तक पितरों के साथ ब्रह्म लोक में बास करता है। उर्वशी अप्सरा के समान सैकड़ों सुन्दर स्त्रियां को पाता है और सहस्रों नारियों के मध्य में बहुतों का पति होता है।

इससे बढ़कर अब क्या चाहिये। मुसल्मानों के स्वर्ग लोक और सनातनियों के ब्रह्मलोक की तुलना कीजिये कैसी लालच दिखाई गई है। जो ब्रह्म लोक ब्रह्म ज्ञानियों का स्थान माना जाता है उसे पुराण कार ने मुसलमानों का बहिश्त बना डाला परन्तु जैसे मुसलमानो ने औरतों के लिए कुछ न लिखा वैसे इन पौराणिको ने न कुछ लिखा। बेचारे लिखने में शर्मा गये। यह बतलाना चाहता था कि औरतों को कितने कितने मर्द मिलेंगे

श्लोक—प्रयागंस्मरमाणोपियस्तुप्राणान्परित्यजेत्
ब्रह्मलोकमवाप्नोतिमहीयत्रहिरण्मयी ।। १७० ।।
सर्वकामफलावृक्षा: तिष्ठन्तिऋषयोगता:
श्रीसहस्राकुलेरम्येमन्दाकिन्या: शुभेतटे
क्रीड़तेयक्षगन्धर्वै: पूज्यतेत्रिदशैस्तथा
तत: पुनरिहायातोजम्बूद्वीप पतिर्भवेत् ॥ १७२ ।।

प्रयाग का स्मरण करते हुए जो प्राण का त्याग करता है वह ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है जहां सोनेकी भूमि है। वहां के वृक्ष

सब इच्छाओं को पूर्ण करने वाले होते हैं। मन्दा किनीके शुभ तट पर यक्ष और गन्धर्वों के साथ मौज करता है और देवों से पूजा जाता है फिर जन्म पाकर जम्बू द्वीप का पति होता है। इस प्रकार बुद्धि विरुद्ध माहात्म्य लिख कर मूर्ख जनता को प्राण देने के लिये फंसाया गया है। प्रभावका स्मरण करके मरने वाले को ब्रह्म लोक की प्राप्ति लिखमारी। जहांपर आनन्द लूटने के लिये सुन्दर सुन्दर स्त्रियों का लोभ दिया है। जिस ब्रह्मलोक की प्राप्ति योगियों और ब्रह्मज्ञानियों को भी दुर्लभ है वही प्रयाग में मर जाने से होती है पुराण ने कैसी वेद विरुद्धबात लिखी हैं। लाखों स्मरण कर्त्ताओंके लिये लाखों नये जम्बू द्वीप बनेंगे?

यह सब लेख अज्ञाक मूलक है। यदि प्रयाग या काशी में मर जाने से मुक्ति होने लगे तो धर्म कर्म की आवश्यकता ही क्या रह जावेगी। आज कल तो प्राण देने की प्रथा नहीं है पर पहले हजारों आदमी हर साल कुम्भ के अवसर पर बट-वृक्ष से कूद कर प्राण दे देते थे। हर्ष वर्धन के समय में चीनी यात्री ह्वेनसांगने भी अपने यात्राविवरण में इसकी चर्चा की है। "उस समय पातालपुरी मन्दिर (जो आजकल किले में जमीन के अन्दर है) के सभामण्डप के सामने अक्षय वट का वृक्ष था। इसकी डालियाँ और टहनियाँ दूर तक फैली हुई थीं जिससे सघन छाया रहती थी तथा वृक्ष के आस-पास आत्म घात करने वालों की हड्डियों का ढेर लगा रहता था। यह परम्परा आगे भी चलती रही और आज भी बड़ी श्रद्धा तथा विश्वासके साथ लोग अपना प्राण विसर्जन कर देते हैं। उस युग के लोगों के कट्टर विश्वास तथा प्राण त्यागके विभिन्न विधानों पर प्रकाश डालते हुये ह्वेनसांग लिखता है कि महादान भूमिके पूर्व और दोनों नदियों के संगम पर प्रतिदिन सैकड़ों मनुष्य

स्नान और प्राणत्याग करते हैं। उनका विश्वास है कि जो कोई स्वर्ग में जन्म ग्रहण करना चाहेगा वह केवल एक दाना चावल खाकर उपवास करे और फिर संगममें डूब मरे ऐसा करने से अवश्य ही वह देव कोटि में स्थान पाता है। फलत: अनेक प्रान्तों से लोग यहाँ झुण्डके, झुण्ड आते थे सात दिन तक निराहार उपवास करते और फिर अपने जीवन को समाप्त कर देते हैं।

योगाभ्यास करने वाले अन्य धर्मावलम्बी पुरुषोंने नदी के मध्य में एक बड़ा खम्भा बना रक्खा है योगी लोग उस खंभे पर चढ़जाते हैं तथा एक पैर और एक हाथ से उस खंभे में चिपट कर बिलक्षण रीतिसे अपना दूसरा हाथ और पैर बाहर फैला देते हैं सूर्य की तरफ नेत्र तथा मुख करके सूर्यास्त हो जाने तक इसी प्रकार लटके रहते तथा अंधकार हो जाने पर नीचे उतर आते हैं। कई दर्जन योगी यहां इस प्रकार निवास करते हैं बहुत से तो वर्षों से यही साधना कर हैं उनका विश्वास है कि ऐसा करने से वे जन्म मरण से मुक्त हो जावेंगे।

फिर वह लिखता है कि हर्ष के काल में भी प्रयाग में प्राण दान के सन्बन्धमें ऐसी ही धारणा थी। वह लिखता है कि नगर के भीतर एक देवमन्दिर बहुत ही सुन्दर और सुसज्जित है जिसके चमत्कार की बड़ी प्रसिद्धि है। यदि कोई मनुष्य अपने जीवन को तुच्छ समझ कर इस मन्दिर में प्राणत्याग करे तो स्थायी सुख प्राप्त करने के लिये उसका जन्म स्वर्ग में होता है। मन्दिर के सभा मण्डपके सामने एक बड़ा वृक्ष है जिसके आस पास अस्थियों का ढेर लगा रहता है। जो मनुष्य इस मन्दिर में आता है उसको इन अस्थियों के ढेर को देखकर शरीर का अन्तिम परिणाम विदित हो जाता है और यह अपने जीवन

को धिक्कार कर प्राण विसर्जन कर देता है ऐसा करने में जिस प्रकार उनको अपने सहधर्मियों से सहायता मिलती है इसी प्रकार वे लोग भी जो पहले से आत्म घात कर चुके हैं उसे खूब भुलावा देते हैं और यही कारण है कि यह हत्यारिणी प्रथा प्रारंभिक काल से लेकर अब तक बराबर चली आ रही है। उस समय न केवल अपढ़ बुद्धिहीन व्यक्ति ही इस प्रकार की बातों में विश्वास करते थे बल्कि विद्वान व्यक्ति भी यहां आकर प्राण त्यागके बहकावे में आजाते थे जैसा कि ह्वेनसांग के इस निम्न दृष्टान्त से प्रकट है। थोड़े दिन हुये एक ब्राह्मण ने जो विद्वान दूरदर्शी एवं ज्ञानी था और जिसके वंश का नाम "पुत्र" था यहां आकर एकत्र लोगों से कहा—सज्जनों आप भटके हुये मार्ग पर हैं आपके चित्तमें जो समाया है वह किसी प्रकार निकाले नहीं निकल सकता आपको किस प्रकार समझाया जाय फिर वह भी उनकी टोली में सम्मिलित हो पेड़ पर चढ़ गया उसने सोचा कि इनके बीच में रहकर धीरे धरे इनका बिचार परिवर्तन संभव हो सकेगा किन्तु ज्यों ही वह पेड़ पर चढ़ा उसके अपने ही बिचार में परिर्तन हो गया। वह कहने लगा अब मैं भी मरना चाहता हूँ। पहले मैंने लोगों को कहा था कि यह विश्वास गलत और घृणित है पर अब मैंने समझा कि यह उत्तम और शुद्ध है। स्वर्गीय ऋषि वायुमण्डल में बाजे बजाते हुये मुझे बुला रहे हैं मैं ऐसे पुनीत स्थान से गिरकर अवश्य प्राण त्याग करूँगा। अपने मित्रोंके समझाने बुलाने पर भी न माना और कूद पड़ा परन्तु जब वह गिरा तो मित्रों ने कपड़ा फैला कर उसे रोक लिया और उसकी जान बच गई। होश में आनेपर वह कहने लगा। मैं समझ रहा था कि मैं देवताओं को वायुमण्डल में देख रहा हूँ और वे सब मुझे बुला रहे हैं किन्तु अब विदित हुआ

कि यह सब वृक्ष के प्रेतों का छल था जिससे भविष्य में स्वर्गीय आनन्द पाने से वंचित रहूँ।

अब पाठक समझ गये होंगे कि कितना भारी अन्ध विश्वास इस हिन्दू समाज में धर्म के नाम पर चल पड़ा है जो देश के लिये एक बड़ा भारी कलंक है।

अब आज-कल के पण्डितों की शरारत देखिए पण्डित बलराम शास्त्री जी ने लिखा है :—

समुद्र मन्थन के बाद समुद्र से निकले रत्नों का बटवारा हुआ उत्तमोत्तम रत्न तो विष्णु ने लिया। विष शङ्कर ने पी लिया अमृत के लिये देवों और राक्षसों में प्रतिद्वन्द्विता हुई। देव लोग दानवों को देना नहीं चाहते थे! देवों ने इन्द्र पुत्र जयन्त को ओर इशारा किया। जयन्त अमृत कलश लेकर उड़ा। असुरों ने उसका पीछा किया। अमृत घट बचाने के लिए सूर्य चन्द्र और गुरु तत्पर थे। रास्ते में छीना झपटी में हरिद्वार नासिक प्रयाग उज्जैन में अमृत छलक कर गिर गया इसीलिए यहाँ कुम्भ लगता है।

क्यों शास्त्री जी क्षीरसागर जो मथा गया कहाँ है ? भूमि पर या कहीं अन्यत्र ? ईश्वर राग के रहित किसी का पक्षपाती नहीं फिर देवों का पक्षपात करके असुरों को धोखा देने वाला विष्णु ईश्वर कैसे ? इसका उत्तर आप के पास क्या है ? कौन से देव अमृत पान से अमर हो गये ? देवी भागवत स्कन्ध ५ अ० १३ में लिखा है। सबही देव मरणशील हैं। शरीर धारी अमर नहीं हो सकते और विष्णु आदि सभी देवों को मरणशील बतलाया है। भागवत और देवी भगवत में कौन सत्य है ? वास्तव में समुद्र काल्पनिक है कथा काल्पनिक और कुम्भ काल्पनिक। अब आगे चलिए।

आप ने तीन, चार वेद मन्त्र देकर उनमें कुम्भ शब्द देख-कर मनमाना अर्थ करके कुम्भ पर्व सिद्ध करने का प्रयत्न किया है जो सर्वथा आप का जाल है। आप ने पूर्ण कुंभोधिकाल: इस मन्त्र को आज पत्र में ऋग्वेद के नाम से लिखा है। मालूम होता है आप ने ऋग्वेद देखा भी नहीं किसी दूसरे का लेख देखकर मनमानी अर्थ करके जनता को धोखा दिया है।

आपही के समान कुछ अन्य पण्डितो ने भी—यथा श्री जिज्ञासुजी श्री रामप्रताप शास्त्री श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी आदि—अनर्थ किया है। मैं उन सब मंत्रों को यहाँ लिख कर पद-पादार्थ सायण भाष्य के अनुसार देता हूँ देखिये आपने जनता को कैसा धोखा दिया है। आजकल भी आपका पण्डित समाज धोखा देने से नहीं चूक रहा है यह बड़े शर्मकी बात है।

श्लोक—कुम्भोधिकाल आहितस्तं वैपश्यामो बहुधानुसन्त:
सद्‌माविश्वाभुवनानि प्रत्यङ्कालंतमाहु: परमेव्योमन् ॥
अथर्व १९। ५३। ३

(काले) सर्वजगत्कारण भूतेनित्ये अनवच्छिन्ने परमात्मानि
स्वस्वरूपे (पूर्ण) व्याप्त:—कुम्भ: कुम्भवत्
अहोरात्रमासतु सम्वत्सरादिरूप: —
अवच्छिन्नो जन्यकाल: (आहित:)। अत्र विद्वदनुभवश्रतिं
प्रमाणयति। तंजन्यं कालं सन्त: सतद्रूपब्रह्मोपासकावयं,
बहुधा नाना प्रकारं अहोरात्रादिरूपेणपश्याम:अनुभवाम:। अथवातंजन्यकालाधारंपरमात्मानं बहुधावहुभि:श्रवणमनननिदि-ध्यासनै: पश्याम: साक्षात्कुर्म:।सइमानिविश्वा विश्वानि भुवनानि भूतजातानि प्रत्यङ् प्रत्यञ्चन: अभिमुखञ्चन: आव्याप्नुवन् भवति तंजन्यंकालं परमे उत्कृष्टे व्योमन् आकाशवत् निर्लेपे सर्वगतेपरमानन्दप्रदायकेस्वस्वरूपेवर्तमानंआहु: विद्वांस: ॥

अथर्व १९-५३-३

भाषार्थ—(काले) सर्वजगत्कारणभूतनित्य अनवच्छिन्न परमात्माके स्वरूप में व्याप्त कुम्भके समान दिन-रात-मास-ऋतु-सम्वत्सरादि रूप अवच्छिन्न, जन्यकाल, निहित है (तंकालं) उस उत्पन्नकाल को (सन्तः सद्रूप ब्रह्मोपासक—हम लोग नाना प्रकार से अहोरात्ररूप से अनुभव करते हैं मनन निदिध्यासन के द्वारा अनेक प्रकार से साक्षात्कार करते हैं। वह इन सम्पूर्ण भूतमात्र को व्याप्त कर रहा है उत्कृष्ट आकाशवत् निर्लेप सर्व व्यापक परमानन्द प्रदायक परमात्माके स्वरूप में उस जन्म काल को विद्वान लोग वर्तमान कहते हैं।

जघान वृत्रं स्वधितिर्वनेव रुरोज पुरो अरदन्न सिन्धून्।

विभेद गिरिं नवमिन्न कुम्भमागा।

इन्द्रो अकृणुत स्वयुग्भिः॥ ऋ १०—८७—७

भाष्य—इन्द्रो वृत्रमसुरंजघान हतवान् अपिच स्वधितिः परशुः बनेव वनानि इव पुरः शत्रु नगरीः रुरोज रुजतिभिनत्ति शत्रुनगरीर्भित्वाच सिन्धून् नदीः अरदन् वृष्टिरुदकेन अलिखत् नेति सम्प्रत्यर्थे किंच गिरिं नवमिव कुंभं कलशं विभेद इत् भिनत्त्येव किंच इन्द्रः स्वयुग्भिः स्वयं युज्यमानै मरुद्भिगाः उदकानि अकृणुत अस्मद भिमुखं करोति।

अर्थ—इन्द्र ने वृत्त को मारा और जैसे कुल्हाड़ी से वन को लोग काटते हैं उसी प्रकार शत्रु (वृत्र) के पुरों को तोड़ कर नदियों को तोड़ डाला। उस पुर को तोड़ कर नदियों को वृष्टि के जल से खोद डालता है। यहां न का अर्थ सम्प्रति है और मेघ को नये घड़े के समान फाड़ डालता है और इन्द्र स्वयं प्रयुक्त मरुद्गणों के साथ जल को हमारे सामने कर देता है।

इन्द्र, सूर्य वा विद्युत्। वृत्र-मेघ (निरुक्त देखो) मेघका 'नगर कौन ? मेघ समूह। गिरि इतिमेघनाम निरुक्त।

भावार्थ—इन्द्र (विद्युत) मेघ को छिन्न भिन्न कर डालता है और मेघों को छिन्न भिन्न करके वृष्टि के जल से नदियों को भर देता है। मेघ को नये घड़े के समान फोड़कर मरुद्गणों के साथ जल को हमारे सामने कर देता है। कहिये कुम्भ पर्व कहां गया ? यहाँ तो इन्द्र वृत्र का युद्ध वर्णन है। शास्त्री जी ने ठीक एक पादरी के समान धोखा दिया है। एक ईसाई पादरी ईशावास्य-इस मंत्र के आधार पर मूर्खों में उपदेश दे रहा था कि देखो ईशा तुम्हारे वेद में भी हैं ऐसे हमारे शास्त्री जी जहां कहीं कुम्भ शब्द देखा वहां वहां सबका अर्थ कुम्भ पर्व करके अज्ञानी जनताकी आंख में धूल झोंक दी।

हम तीर्थ के विरोधी नहीं, अन्ध विश्वासके विरोधी हैं जिसने हिन्दुओंको वेद-शास्त्रों के विमुख करके अज्ञान के गर्त में डाल-दिया है। आप पुराणों के गप्पों को वेदसे दिखलाने लगे अतः समालोचना करना हमाराकर्तव्य है। आपने ऋग्वेदका परिशिष्ट कहकर निम्न मंत्र दिया है जो वेद मंत्र नहीं है—

श्लोक—सितासिते सरिते यत्र संगते
तत्रप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति
ये वैतनुं विसृजन्तिधीराः
तेवैजनासो अमृतत्वं भजन्ते ॥

यह भी एक बड़ा भारी धोखा है। पौराणिकों ने नये श्लोक की सृष्टि करके अपने मतलब के लिये वेद मंत्र कह दिया। श्रीमान् जी यह वेद का नहीं है परिशिष्ट का अर्थ तो हो होता है छूटा हुआ, पूरक, इस शब्द से ही सिद्ध है कि यह वेद मंत्र नहीं और न किसी पुराने छपे ऋग्वेदमें यह मंत्र परिशिष्ट रूपमें दिया हुआ

है शकसम्वत् १८१० का छपा ऋग्वेद मेरे पास है तथा मेक्स मूलर एडीशन जो बहुत पुराना है उसमें भी नहीं है। वेद मंत्रों की संख्या गिनी गिनाई है उसमें तो ये पौराणिक मिला नहीं सकते थे। अतः वेदके नाम पर श्लोक बनाकर परिशिष्ट कहकर लिख मारा। इस बीसवीं शताब्दी में भी ये पौराणिक ४२० करने से नहीं चूकते जब कि वेदों का स्वाध्याय सबही लोग करने लग गये हैं।

आपने कुम्भावनिस्ठुमन्त्र का अर्थ किया है :—

कुम्भ पर सत्यकर्म करने से शारीरिक सुख एवं भविष्य जन्म ग्रहण की समस्या अन्तर्हित हो जाती है-यह अर्थ क्या पद-पदार्थ से हो सकता है। यदि आप करदें या अपने पूर्वाचार्यों के पद-पदार्थ से ही करदें तो मैं ५००) आपको पारितोषिक दूँगा। ऐसे ही और मंत्रों के विषय में आपको चैलेञ्ज देता हूँ। शास्त्री जी, यदि आप महीधर भाष्य ही देख लेते तो व्यर्थ वेद को कलंकित करने का सेहरा आप पर न रखा जाता। आधुनिक पण्डितों का दुःसाहस देख कर ही हमें कलम उठानी पड़ी हैं।

द्विजों को तीर्थ में जाने का निषेध—

यस्येष्टियजेष्वधिकारितास्ति वरंगृहंगृहधर्माश्च सर्वे।
एव गृहस्थाश्रमसंस्थितस्यतीर्थे गतिः पूर्वतरैर्निषिद्धाः॥
सर्वाणितीर्थान्यपिचाग्निहोत्र तुल्यानि नैवेतिवदन्ति केचित्।

जिसको इष्टि तथा यज्ञ में अधिकार है उनके लिये घरही सबसे अच्छा है, इस प्रकार गृहस्थाश्रम में रहने वाले द्विजों (ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य) के लिये पूर्व के आचार्यों ने तीर्थ गमन निषेध कर दिया है। कोई कोई आचार्य अग्नि होत्र के तुल्य किसी भी तीर्थ को नहीं बताते है।

जब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों को तीर्थ में जाने के लिये स्पष्ट निषेध है तब ये लोग तीर्थों में क्यों जाते हैं। असल बात तो यह है कि आज-कल ब्राह्मण क्षत्रिय तथा वैश्य वास्तव में शास्त्रा-नुकूल ब्राह्मणादि न रहे और सभी अपना-अपना वेदादि पठन तथा तदनुरूप आचरण छोड़ कर शूद्र बन गये हैं। तभी तो ये तीर्थों में जो केवल शूद्रों के लिये बनाये गये हैं सस्ती मुक्ति के लिये जाकर धन धर्म का नाश करते हैं।

एकबात और भी बड़े मार्के की है। आज-कल जितने लोग तीर्थों में जाते हैं उनको पुराणानुसार तीर्थ फल नहीं मिलता। क्योंकि कोई सवारी से, कोई रेलवे से, कोई बैलगाड़ी से, कोई घोड़ागाड़ी से तीर्थों में जाते हैं परन्तु पुराण इस प्रकार जाने वालों के लिये तीर्थ गमन निष्फल बतलाता है। जो बैलगाड़ी से जाता है उसे गोवध का पाप लगता है। यथा:—नारद पुराणे अ० ६२ उत्तरार्धे।

ऐश्वर्य्यात्लोभमोहाद्वागच्छेद्यानेनयोनरः
निष्फलंतस्यतत्तीर्थं तस्माद्यत्नेन वर्जयेत्
गोयानेगोवधः प्रोक्तः हययानेतु निष्फलम्
नरयानेतदर्धंस्यात् पद्भ्यांतच्चतुर्गुणम्॥ ३४ ॥

अर्थ—ऊपर दिया गया है पुराणों ने भौमतीर्थाभिगमनका फल बड़ी चालाकीसे लिखा है। अ०६२ ना० पु० उत्तरार्ध श्लोक१३, १४, १५, जो मनुष्य किसी से दान नहीं लेता, जो परिश्रम से मिलजाय उसी में सन्तुष्ट रहे अर्थात् लोभरहित हो अहंकार लेश मात्र भी न हो, अल्पाहारी हो व्यर्थ बकवाद न करने वाला हो किसी भी वस्तु में आसक्ति न हो साथही जितेन्द्रिय हो उसे ही तीर्थ फल मिलता है। पाठकों, जो काम क्रोध लोभ मोह से रहित विषयों में आसक्ति रहित राग द्वेष से दूर जितेन्द्रिय हो उसे

तो मुक्ति या स्वर्ग मिलही जावेगा। वह तीर्थों में जावेगाही क्यों ? वह तो पापी नहीं, फिर तीर्थ फल उसे मिलेगा ऐसा लिखना या तो धोखेबाजी कही जा सकती है या साधारण पशु बुद्धि वाली जनता के लिए प्रोत्साहन देना। ताकि वहाँ तीर्थों के लुटेरे पण्डे पुजारियों को मुफ्त में पेट पालने का मौका मिले। नहीं तो ऐसा क्यों लिखता कि पापी भी मुक्त हो जाता है, शुद्ध कर्म करने वालों की बात तो दूर रहे। ब्राह्मण पूजा के पक्षपाती कुछ अज्ञानी लोग कह बैठेंगे कि आप का यह कथन अनर्गल है कि ब्राह्मणों की पेट पूजा के लिये तीर्थ बनाये गये। इसके उत्तर में हम उसी पुराण के अ० ६१ का प्रमाण आपके सामने उपस्थित करते हैं, सुनिये—

कपिलाशतदानेन यत्फलं पुष्करे स्मृतम्
तत्फलं कृष्णमालोक्य मंचस्थं सहलायुधम्
कन्याशतप्रदानेन यत्फलं पुष्करे स्मृतम्
तत्फलं कृष्णमालोक्य मंचस्थं लभतेनरः

पुश्कर में १०० गऊ दान करने से अथवा कन्यादान का जो फल मिलता है वह फल जगन्नाथ में मंचस्थ कृष्ण बलराम को देख करमिलता है। आगे लिखा है—

सुवर्णवस्त्रगोधान्यैर्द्रव्यैश्चान्यैर्वरैर्बुधः
सम्पूज्यतान् नमस्कृत्य इमं मंत्रमुदीरयेत्
सर्वव्यापी जगन्नाथः शंखचक्रगदाधरः
अनादिनिधनोदेवः प्रीयतांपुरषोत्तम।
इत्युश्चार्यततोविप्रान्त्रिः प्रक्रम्याथसादरम्
प्रणम्यशिरसाभक्त्यासाचार्यास्तान् विसर्जयेत्
ततस्तान् ब्राह्मणान् भक्त्याचासीमान्त मनुव्रजेत्
अनुव्रज्यतुतान् विप्रान् नमस्कृत निवर्त्य च

वान्धवैः स्वजनैर्युक्तः वतो भुंजीत वाग्यतः
अश्वमेधसहस्रस्य राजसूय शतस्य च
अतीतं शतमुद्धृत्य पुरुषाणां नरोत्तमः ।
भविष्यच्चशतंदेवि दिव्यरूपधरोव्ययः
सर्वलक्षण सम्पन्नः सर्वाभरणभूषितः ॥ ७५
उद्योतयन् दिशः सर्वाः आकाशेविगतक्लमः
युवा महाबलोधीमान् विष्णुलोकंसगच्छति

अर्थ—सुवर्ण, वस्त्र, गौ, धान्य तथा अन्य उत्तम द्रव्यों से उन ब्राह्मणों को पूज कर और नमस्कार करके इस मंत्र को पढ़े। अब मंत्रार्थ सुनिये। जगन्नाथ जी सर्वव्यापी शंख चक्र गदा धारण करने वाले आनदिनिधन पुरुत्तोम प्रसन्न हों ऐसा उच्चारण करके ब्राह्मणों की तीन परिक्रमा करे। भक्ति पूर्वक झुक कर प्रणाम करे। पश्चात् आचार्य के साथ उन्हें विदाकरे और सीमापर्यन्त उनके पीछे पीछे जावे, फिरलौटकर बन्धु और स्वजनों के साथ मौन होकर भोजन करे। तब क्या फल मिलता है:—हजार अश्वमेध राज सूय यज्ञ करने का फल मिलता है। बीते हुये १०० और आने वाले १०० पुरुषों को तार कर सर्वलक्षण सम्पन्न दिव्यरूप धरकर सब आभूषणों से भूषित होकर विष्णुलोक को पाता है। इसके आगे और तीर्थ ब्राह्मण पूजा का माहात्म्य सुनिये। वहां सौ कल्प तक वास करके ब्रह्मलोक को, वहां ९० कल्प सुख भोगकर गोलोक को, वहां ७० कल्प सुख भोग कर प्रजापति लोक को, पश्चात् इन्द्रलोक को, पचास कल्प सुख भोग कर देवलोक को, ४० कल्प वहाँ सुख भोग कर नक्षत्र लोकको, ३० कल्प वहाँ सुख भोग कर आदित्य लोक को, दश कल्प वहाँ सुख भोगकर गन्धर्व लोक को, वहां एक कल्प सुख भोगकर पृथ्वी लोक पर जन्म लेकर धार्मिक राजा होता है। चारों युग जब हजार

वार बीतते हैं तो ब्रह्मा का एक दिन होता है उतनी ही रात्रि होती है इसी का नाम कल्प है। अब हिसाब लगा लीजिये। पाठकवृन्द देखिये तीर्थमें ब्राह्मण पूजन का फल। अज्ञानी जनताके मनमें ये ही माहात्म्य ठूँस ठूँस कर भर दिये गये। यद्यपि अब इस माहात्म्य का पूरा पूरा ज्ञान किसी को नहीं फिर भी परम्परागत स्वर्ग प्राप्ति के निमित सब तीर्थ में जाते हैं और लुटेरे पण्डे पुजारियों धूर्त ब्राह्मणोंको दान करते हैं। इसी लिये हम कहते हैं कि ये तीर्थ निठल्ले व्यभिचारी अनाचारी वेदविद्याहीन मूर्ख और धूर्त ब्राह्मणों के उदर पूर्ति के लिये बनाये गये हैं।

इसी प्रकार एकादशी माहात्म्य, गया महात्म्य, काशी माहात्म्य, कुरुक्षेत्र माहात्म्य, कार्तिक माहात्म्य, जगन्नाथ माहात्म्य, गङ्गा माहात्म्य तथा इसी प्रकार अन्य अन्य माहात्म्य लिखकर कथा वाचक लोग जनता को सुना सुनाकर ऐसा प्रभावित किया कि अन्धी भेंड के समान अबतीर्थों में मारामारी फिरती है और अनेक सम्प्रदायों में मूडीजाकर परमात्मा को मनुष्यवत मान सत्यपथ से विचलित हो गई। अब थोड़ा सस्ती मुक्ति की भी बात सुनिये—

एकादशी व्रत से ब्रह्म हत्या सुरापान चौर्यकर्म परस्त्रीगमन के महापातक नाश हो जाते हैं। नैमिषारण्य गया प्रभासक्षेत्र रेवा सरस्वती गंगा यमुना प्रयाग आदि तीर्थ, होम दान तप अन्य शुभ कर्म पापों को नष्ट करने के लिये एकादशीव्रत के सिवाय समर्थ नहीं होते। शास्त्र विरुद्ध, इतना असत्य माहात्म्य लिखकर वैष्णवों ने चेला मूड़ने का जाल तैयार किया है। वैष्णव भाइयों देखो इस माहात्म्य को पढ़ गंगा स्नान को न जाना देखो इस माहात्म्य को पढ़ खूब व्यभिचार करो, चोरी करो होम-दान की भी तुम्हें आवश्यक नहीं। दुनियाँ भरका कुकर्म करे परन्तु १५ वें

दिन एकादशी व्रत रहकर सिंघाड़ा, आलू, फलहारी मिठाई खूब खाओ क्या मजाल है कि आपमें पाप रह जाय। १६ वें दिन फिर दूसरा लायसेन्स पाप करने का मिलजायगा। ऐसे लिखने वालों को शरम भी न आई इसके चक्कर में मूर्ख ही क्यों शिक्षित वैष्णव भी पड़े हुये हैं। १५ वें दिन निराहार रह कर पेट को साफ करलेना तो बुरा नहीं पर उक्त माहात्म्य को सुन कर भूखे रहकर जो माल उडाते है वे तो महा मूर्ख हैं। न स्वास्थही बनेगा न पाप का क्षय होगा। ना० पु० उ० अ० ३१ श्लोक से ३३ से ३८ तक—

अब उसी पुराण के अ० ३८ में गंगा माहात्म्य सुनिये। तप ब्रह्मचर्य, यज्ञ दान, तप से वह गति नहीं मिलती जो गंगा स्नान से मिलती है। मुक्ति की खोज करने वाले दुःखी प्राणियों की गति गंगा स्नान से होती है। हिमालया और विन्ध्यपर्वत के समान यदि पाप राशि हो तो वह गङ्गा के जल से नाश हो जाता है। गङ्गा जलमें प्रवेश करते ही ब्रह्महत्यादि पाप हाय हाय करके भाग जाते हैं। गङ्गा के किनारे रहने, उसका जल पीने से पूर्व संचित सभी पाप नाश हो जाते हैं। अष्टांगयोग तप आदि से क्या प्रयोजन, गङ्गा के किनारे वास ही सब प्रकार श्रेष्ठ है।

हजार दो हजार चान्द्रायण व्रत से जो फल मिलता है उससे अधिक फल गंगा जल पान से मिलता। श्लोक ६ से ५८ तक का सार।

अ० ३६ गंगा दर्शन का फल—गंगा के दर्शन स्नान, जलस्पर्श से मनुष्य सात पहले के और सात आगे के पितरों को तारदेता है। गंगा दर्शन मात्र से इन्द्रियों की चपलता व्यसन सब पाप निर्दयता नष्ट हो जाती है परमात्मा के दर्शन से जो फल मिलता है वह फल गंगा के दर्शन से मिलजाता है। ब्रह्म-

सन्दर्भ पुस्तक
परिग्रहण क्रमांक 2864
दयानन्द महिला महाविद्यालय, कुरुक्षेत्र

हत्या गुरुघात गोवध के पाप तथा सर्व प्रकार के पाप गंगाजल के स्पर्श मात्र से नाश हो जाते हैं। श्लोक २ से २८ तक के सारांश।

इसकी परीक्षा करके सत्यता का अनुभव करो यदि दर्शन मात्र से इन्द्रियों की चपलता, गाजा, भाग, तमाखू, चरस, पीने का व्यसन तथा क्रूरता खतम हो जाय तो समझलो माहात्म्य सत्य नहीं तो बिल्कुल असत्य केवल पौराणिकों का जल है, एक बात और, यदि माहात्म्य को सत्य मानते होतो गोहत्याहो जाने पर प्रायश्चित मत करो। गंगा में स्नान करलो बस पाप गायब। कोई आपत्ति करे तो उक्त प्रमाण पेश करदो।

अर्धोदकेनगंगायां म्रियतेनशनेनय:
स यातिन पुनर्जन्म ब्रह्मसायुत्रृज्यमेति च ॥

सप्तावरान् सप्तपरान् पितृन् तेभ्यश्चये परे।
पुमान् तारयते गंगां वीक्ष्यस्पृष्टवावगाह्य च ॥

गंगाके भीतर खड़े होकर जोअनशन द्वारा प्राण त्याग करता है उसका पुनर्जन्म नहीं होता और ब्रह्म में मिल जाता है। जो गति योगियों की होती है वही गति गंगा में मरजाने से होती है, गंगा के किनारे अनशन करके जो मरजाता है वह पितरों के साथ उत्कृष्ट लोक अर्थात् विष्णु लोक को प्राप्त होता है।

जब गङ्गा स्नान दर्शन गङ्गा जल पान में इतना सामर्थ्य है तो फिर मनुष्य सत्कर्म क्यों करेगा। गया श्राद्ध भी व्यर्थ ही है। जिसे कोई गया में पिण्डदान करने को कहे तो उसे कह देना चाहिए कि हमने गङ्गा को देख जलपान कर लिया ७ पुरखे पीछे क ८ पुरखे आगे के सब तर गये अब पिण्डदान क्यों करे और यह श्लोक पढ़ कर अपना पिण्ड छोड़ा ले।

जब गंगा दर्शन परमात्मा के दर्शन के समान है तब मनुष्य क्यों उसकी प्राप्ति के लिए उद्योग करेगा।

यागतिर्भोग मुक्तस्य सात्विकस्य मनीषिण:

सागतिस्त्यजत: प्राणान् गंगायां तुशरीरिण:

एकादशी माहात्म्य ने गंगा का महात्म्य को व्यर्थ कर दिया और उसी कामहात्म्य आगे लिखने लगे क्या भांग खाकर लिखने बैठे थे। इन्हीं सब महात्म्यों को सुनकर हिन्दू समाज अध्यात्मवाद से सैकड़ों पोरसा नीचे चला गया। चोरी जारी ठगी-जालसाजी बेइमानी आदि सम्पूर्ण पापों को करता हुआ भी एक दिन के एकादशी व्रत अथवा गंगा स्नान से अथवा गंगा दर्शन मात्र से सब पापों से छूट कर वैकुण्ठ चला जाता है तब कष्ट साध्य ब्रह्मचर्य इन्द्रिय निग्रह योग जप तप क्यों करेगा? रोज पाप करते जावे वेश्या के कामघरमें गोता लगाकर गगा में गोता लगा लिया करे ब्रह्म सायुज्य तो हाथ में धराही है। इन पौराणिकों ने हिन्दू समाज को इन बातोंको लिखकर कितना गिरा दिया है। वह हिन्दुओं की करनी पर से पता लगावें।

प्रयाग माहात्म्य तो पीछे लिखा जा चुका है, अब काशी माहात्म्य भी सुन लीजिये। आपका कष्ट दूर हो जायगा और अनायास आपको स्वर्ग मिलेगा।

जो मनुष्य काशी का माहात्म्य सुनलेता है वह चाहे ब्रह्म हत्यारा हो. चाहे शराबी हो या चोर हो, चाहे गुरुदार गमन का पापी हो वह काशी का माहात्म्य सुनकर सब पापों से छूट जाता है। विद्यार्थी विद्या पाता है, धनार्थी धन पाता है, जायार्थी स्त्री पा जाता है सुतार्थी पुत्र पाता है, यह तो माहात्म्य श्रवण फल है अब काशीवास का फल सुनिये। उक्त पुराण अ० ४८ महादेव पार्वती से कहते हैं। एक महीने तक एक बेला खाकर

जो काशी में रहे तो जीवन भर का पाप एक महीने में छूट जाता है।

विषय बासना में फँसा हुआ, भक्ति हीन यदि इस क्षेत्र में मर जाता है तो उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

सहस्रों जन्मान्तर में योगी जिस पदको प्राप्त करता है उस पद को मनुष्य काशी में मरने से प्राप्त करता है, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य, शूद्र, वर्ण संकर क्रिमि म्लेच्छ, कीट चींटी मृगापक्षी समय पाकर मरने से वे देवेश्वर पद प्राप्त करते हैं। यहाँ मरने वाला कोई नरक में नहीं जाता है। इत्यादि।

पुनश्च स्कन्द पुराण काशी खण्ड उत्तरार्ध
अ० ८६ में शिव जी कहते हैं
अतीतं वर्तमानं च ज्ञानतोज्ञानत: कृतम्
यदेनस्तल्लयंयाया दानन्द वनवीक्षणात्
अत्युग्रै श्चतपोभिर्यत् महादानै:महाव्रतै:
नियमैश्चयमै:सम्यक् स्वयोगेन महामखै:
वेदान्तशास्त्राभ्यसनै: सर्वोपनिषदाश्रयात्
एभिर्यदवाप्येत तत्काश्यां हेलयाप्यते
कर्म सूत्रेण वद्धा वै भ्राम्यन्तितावदेवहि
यावद् वैशेश्वरे धाम्निमम नैव तनुत्यज:
काश्यां सलीलया देवि तिर्यग्योनिजुषामपि
ददामिचान्ते तत्स्थानं यत्रायान्ति नयाज्ञिका:
भूत ग्रामोखिलोप्यत्र मुक्ति क्षेत्रे कृतालय:
कालेन निधन यातोया त्येव परमां गतिम्
विषयासक्त चित्तोपि त्यक्त धर्मर तिस्त्वयि
कालेनोज्झित देहोऽत्र न संसारं पुनर्विशेत्
चाहे ज्ञान से चाहे अज्ञान से भूत और वर्तमान में जितना

भी पाप किया हो काशी के आनन्द वन के दर्शन से नष्ट हो जाता है।

अत्यन्त कठिन तप महादान महाव्रत नियम (शौच सन्तोष तप स्वाध्याय ईश्वर प्रणिधान) यम (अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रह) महायज्ञ, वेदान्त शास्त्र का अभ्यास सब उपनिषदों के ज्ञान, इत्यादि शुभ कार्यों और ज्ञान से जो गति प्राप्त होती है वह काशी में अनायास ही मिल जाती है। कर्म सूत्र से बधा हुआ जीव तभी तक संसार सागर में भटकता फिरता है जब तक कि वह काशी में मरता नहीं और क्या कहें तिर्यक योनि (पशु-पक्षि योनि) में जन्म पाये हुये पापियों को मैं उस गतिको देता हूँ जहाँ याज्ञिक लोगों की भी पहुँच नहीं है सम्पूर्ण प्राणिवर्ग यहां मरने पर परम गति को प्राप्त हो जाते हैं।

समीक्षा—मालूम होता है कि शंकर भंगके नशे में वेद शास्त्र विरुद्ध महा अज्ञानी के समान बोल गये कि ब्रह्मज्ञान से जो मुक्ति प्राप्त होती है वह काशी में मरने मात्र से हो जाती है इसे सिवाय नशेबाजों के और कौन कह सकता है शिवजी को शायद यह सिद्धान्त भूल गया था कि अवश्यमेवभोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् अथवा तमेवज्ञात्वाति मृत्युमेतिनान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय। सिवाय ईश्वर ज्ञान के मुक्तिकी प्राप्ति का कोई मार्ग नहीं शोक है कि पुराण बनाने वाले ने अपने साथ शंकर को भी ले डूबा। वास्तव में क्या कोई योगी ऐसा कह सकता है? यह तो लिंग पूजा करने वालों का मन गढ़न्त है शिवजी के नाम से काशी में इन सम्प्रदायिकों ने लिङ्ग का ढेर लगा दिया है मानो शिव को अपना लिङ्ग पुजवाने का बड़ा शौक था।

जब काशी में बसने और महात्म्य श्रवण का फल मुक्ति है चाहें कोई कितना ही बड़ा पापी हो तो काशी वासियों के लिए

योग तप शुभ कर्म सबही व्यर्थ हैं। जब इतनी सस्ती मुक्ति मिल जाती है तो मुक्ति के लिये कौन काशी वासी व्यर्थ कष्ट सहेगा ?"

ये सब बातें वेद-शास्त्र उपनिषद् आदि सद् ग्रन्थोंके विपरीत मिथ्या हैं। बुद्धिमानों को इस जाल में नहीं फँसना चाहिए। जहाँ इतना अन्धेर है कि एक वेश्या दुराचारी पुरुष महा पातकी तथा तपस्वी की गति समान कही गई है और यह भी शंकर के मुख से । काशी वासी शङ्कर के चरित्र को शिव चरित्र नामक ग्रन्थ में पढ़िये तो पता चलेगा कि पौराणिकों ने कैलाश वासी शिव को कैसा चरित्र हीन और धोखेबाज बनाया है।

अब पाठकों के सामने कुछ तीर्थों की उत्पत्ति लिख कर इस ग्रन्थ को समाप्त करते हैं। तीर्थोत्पत्ति कथा सुनकर आपलोग समझ जावेंगे कि इन पण्डे पुजारियों के पूर्वजोंने कैसी कैसी मिथ्या कथा में रच कर जनता को बहकाया है।

कथा १-अहल्या संगम तीर्थ ब्र० पु० ललितोपाख्यान अ०१६

जब गौतम की स्त्री अहिल्या से इन्द्र ने व्यभिचार किया तो गौतम ने शाप दिया—

भगप्रीत्याकृतंपापं सहस्रभगवान् भव
तामप्याहमुनिः कोपात् त्वं च शुष्कनदी भव।

भग के लिये तुमने पाप किया इसलिये तुम्हें सहस्र भग हो जावे और अहिल्या को शाप दिया कि तू शुष्क नदी हो जा। जब मुनि को मालूम हुआ कि अहिल्या को धोखा दिया गया है तो उन्होंने शाप का निस्तार किया।

यदातुसंगता भद्रे गौतम्यासरिदीशया
नदीभूत्वा पुनारूपं प्राप्यसे प्रियकृन्मम।

जब गौतमी नदी से तेरा संगम होगा तो फिर तू अपने रूप को प्राप्त करेगी और इन्द्र से कहा—

अहल्या संगमेतीर्थे पुण्ये स्नात्वा शचीपते ।
क्षणाद्विधूतपापस्त्वं सहस्राक्षो भविष्यसि

जब तुम अहल्यासंगम तीर्थ में स्नान करोगे तो क्षणमात्र में पाप रहित होकर सहस्रनेत्र हो जाओगे ।

पाठको ! देखें यहाँ पर अहिल्याका नदी होना लिखकर अहल्या संगम तीर्थ की रचना की । यह सही है या उसका पत्थर होना ? कैसी धूर्तता की गई है ।

मृग व्याध तीर्थ अ० ३२ ।

ब्रह्माजी स्वयं मुनियों से कहते हैं:—सावित्री गायत्री श्रद्धा मेधा सरस्वती इन मेरी पाचों कन्याओं में सरस्वती बड़ी सुन्दर थी उसे देखकर मेरी बुद्धि में विकार उत्पन्न हुआ । मैंने उसे पकड़नेकी कामना की उसे समझ कर वह मृगी रूप हो कर भाग गई और मैं मृग रूप धर कर उसके पीछे दौड़ा । धर्म रक्षण के लिये शंभु मृग व्याध बनकर मुझे मारने के लिये दौड़े । वे पांचो कन्यायें मेरे डर से गंगा में मिलगई । महेश्वर ने भी धनुष पर बाण चढ़ा कर मेरा पीछा किया और कहा कि अब मैं तुम्हें मारडालूंगा । तब मैं उस कर्म से निवृत्त होकर कन्या विवस्वान् (सूर्य्य) को दे दी। सावित्री आदि पाचों कन्यायें जहाँ पर गंगा से मिलीं उसका नाम पंचतीर्थ पड़ा ।

तेषु स्नानं तथादानं यत्किंचित्कुरुतेनर:
सर्वकामप्रदंतत्स्यात् नैष्कर्म्यान्मुक्तिदं स्मृतम्
तत्राभवन्मृगव्याध तीर्थं सर्वार्थदंनृणाम्

उनमें स्नान दान जो कुछ भी मनुष्य करता है वह सब कामनाओं को पूर्ण करने वाला हो जाता है और नैष्कर्म से मुक्ति देने वाला कहा गया है । वहां पर मृग व्याध नाम का तीर्थ हुआ

जो मनुष्य को सब पदार्थ देने वाला है। पाठक अब स्वयं समीक्षा करें! ब्रह्मा कैसे पवित्र देवता हैं।

प्रवरा संगम तीर्थ

देवता और असुरों ने समुद्र मथा। उसमें से अमृत निकला सबने मिलकर सलाह किया कि हमलोग का परिश्रम सफल होगया। हमलोग अपने अपने स्थान को चलें शुभ मुहुर्त में हमलोग मिल कर अमृत पान करेंगे। असुर लोग चले गये तब देवों ने बिचार किया कि हमारे वैरी तो चले गये अब ऐसा उपाय करना चाहिये कि असुरो को अमृत न मिले। ऐसा बिचार कर ब्रह्मा के पास गये। शंकर को साथलेकर विष्णु के पास गये और अपना अभिप्राय निवेदन किया। ब्रह्मा विष्णु शिव देवगन्धर्व किन्नर मेरुपर्वत पर आये विष्णु को रक्षक बनाकर सोमपान को बैठे। चन्द्रमा अमृत परोसने लगे। राहु मरुद्रूप धारण कर उनके बीचमें जा बैठा। सोमने राहुको अमृत दे दिया तब सूर्य्य ने सोमसे कहा कि यह तो राहु है। सोमने जब विष्णु से कहा कि यह राहु है तो उन्होंने उसका शिर चक्र से काट लिया। धड़ गौतमी नदी के दाहिने किनारे पर जा गिरा उस शरीर से प्रवरा नदी निकली। वहां पांच हजार तीर्थ बास करने लगे। वह गंगा नदी में जा मिली और प्रवरा संगम प्रसिद्ध हुआ। इसमें स्नान करने दान देने से सब कुछ प्राप्त होता है।

कहां का ईंट कहाँ का रोड़ा, भान मती ने कुनबा जोड़ा।

शास्त्री जी, अपनी कथा से मिलान कीजिये कौन सही है?

वृद्धा संगम तीर्थ

९६ हजार वर्ष वृद्धा से युवक का विवाह।

वृद्ध गौतम मुनि का पुत्र गौतम हुआ। कारण वशात् वह

वेदाध्ययन न करसका। उसे कोई कन्या न देता था। तीर्थाटन करता हुआ हिमालय पर आकर एक गुफा में प्रवेश किया तो एक कुमारी वृद्धा स्त्री को तप करते देखा। ज्योंही प्रणाम करने चला त्योंही उसने मना किया और कहा आर्ष्टिषेण का पुत्र ऋतध्वज एक बार बनमें गया और गन्धर्वराज की कन्या सुश्यामा को देखकर कामार्त हो गया। वह भी इस पर मुग्ध हो गई दोनो की रति क्रीडा हुई। मैं उसी की कन्या हूँ। माता ने जाते समय कहा कि जो गुफामें प्रथम प्रवेश करेगा वही तेरा पति होगा। मेरा पिता ८०००वर्ष राज्य करके यहीं तप करके स्वर्ग चला गया इसके बाद मेरा भाई दश हजार वर्ष तक राज्य करके स्वर्ग चला गया। मैं क्षत्रिय कन्या हूँ। आप मेरा पाणिग्रहण करें। गौतम ने इनकार किया तब उसने कहा कि ब्रह्माने तुम्ही को मेरा पति बनाया है यदि स्वीकार न करोगे तो तुम्हारे सामने ही मैं प्राण त्याग करूँगी। उसने कहा कि मैं मूर्ख और कुरूप हूँ। उसने सरस्वती की आराधना करके उसे विद्यावान और स्वरूपवान बना दिया। तब दोनो उसी गुफा में आनन्द करने लगे। वहां पर वसिष्ठादि ऋषि घूमते हुये आये। शिष्यों ने हँस कर पूछा—

कृशांविशालां लम्बोष्ठींसलोमांसूर्पकर्णकाम्
दीर्घदन्तां दीर्घनासां दीर्घकेशां तुजर्जराम्
रूपलावण्यसौभाग्य विद्या युक्तं च गौतमम्
संप्रेक्ष्यजहसुः केचित् वालिशाऋषिपुत्रकाः

और पूछा कि यह गौतम तुम्हारा पुत्र है या पौत्र कौन है। यह सुनकर दोनों बड़े लज्जित हुए और अगस्त्य से पूछा कि हम लोग कहां जावें कि हमलोगों का कल्याण हो। इन्होंने गौतम तीर्थ बतलाया। वे दोनो वहां गये। वृद्धा ने स्नान किया और

वृद्धा रूपवती और जवान हो गई। गौतम ने वहाँ एक लिङ्ग स्थापन किया और वह स्थान वृद्धासङ्गम के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

गौतमी (गङ्गा) बोली

अभिषिंचस्व भार्यां त्वं मज्जलैर्मंत्रसंयुतैः
कलशैरुपचारैश्च ततः पत्नी तव प्रिया
सुरूपा चारुसर्वाङ्गी सुभगा चारुलोचना
सर्वलक्षण सम्पूर्णा रम्यरूपमवाप्स्यति
तथेति गाङ्गवचनाद्यथोक्तं तौ च चक्रतुः
सुरूपतामुभौ प्राप्तौ गौतम्याश्च प्रसादतः
वृद्धानदीति विख्याता गौतमोपितथोच्यते
वृद्धगौतम इत्युक्तः ऋषिभिस्तत्रवासिभिः

पाठक, इसकी समीक्षा करना व्यर्थ है। कथा की असम्भवता ही कथा की सत्यता पर पर्दा डाल देती है।

शवतीर्थोत्पत्ति

मरने के बाद दशरथ नरक में अ० ५३

ततस्तु पतितौ वृद्धौ तत्रावां नयमास्पृश।
ब्रह्मघ्न स्पर्शनं पापं न कदाचिद् विनश्यति ।। ७४

पुत्र की मृत्यु सुनकर वे दोनों पति-पत्नी गिर गये और बोले कि तुम हम दोनों को वहाँ ले चलो जहाँ मेरा पुत्र श्रवण पड़ा है। ब्रह्म हत्यारे को छूने का पाप कभी भी नष्ट नहीं होता। दशरथ उन दोनों को वहाँ ले गये....इत्यादि कथा प्रसिद्ध है जब दशरथ जी मर गये तो नरक में गये।

यमसद्मन्यनेकानि तामिस्रादीनिनारद
नरकाण्यथ घोराणि भीषणानि बहूनिच

तत्र क्षिप्तः ततो राजा नरकेषु पृथक् पृथक्
पच्यते छिद्यते राजा पिष्यते चूर्ण्यते तथा
शोष्यते दश्यते भूयो दह्यते च महामते
एवमादिषु घोरेषु नरकेषु स पच्यते

यमलोक में बड़े भयानक तामिस्रादि नाना नरक हैं उनमें दशरथ को ले जाकर डाल दिया। वहाँ पर उन्हें हर प्रकार का कष्ट दिया जा रहा था जब रामचन्द्र गौतमी के तट पर गये तब यमदूतों ने उन्हें नरक से निकाल दिया वे राम के पास गौतमी तट पर गये। दशरथ ने राम से अपनी सारी कथा और कष्ट सुनाया। राम-लक्ष्मण-सीता ने तीनों ब्रह्महत्याओं को परस्पर बाँट लेने के लिए पिता से कहा।

तब दशरथ ने कहा—

गौतम्यां स्नानदानेन पिण्ड निर्वपणेन च
तिसृभिर्ब्रह्महत्याभिर्मुक्तो यामित्रिविष्टपम्

गौतमी में स्नान दान से, पिण्डदान से तीनों हत्याओं से मुक्त होकर मैं स्वर्ग में चला जाऊँगा। राम ने ज्योंही भूमि पर पिण्ड रखा त्योंही दशरथ अदृश्य हो गए।

पिण्डे निपतिते भूमौ नापश्यत्पितरं तदा
शवंचपतितं यत्र शवतीर्थमुदाहृतम् ॥

जब पिण्ड भूमि पर दिया तो पिता न दिखलाई दिये और जहाँ पर उनकी लाश गिरी वही शवतीर्थ नाम से प्रसिद्ध हुआ। पाठक इसकी समीक्षा स्वयं करें, तीर्थ बनाने के लिये कैसी असम्भव कथा लिख मारी। भला दशरथ की लाश कहाँ से आवेगी।

पुत्रतार्थ अ० ५४

शङ्करजी कहते हैं जिस किसी को पूर्वजन्म के पाप के कारण

पुत्र न होता हो अथवा स्त्री या पुरुष में पुंस्त्व न हो तीन महीने तक स्नान करने से पुत्र अवश्य होगा। अपुत्रिणी पुत्र पावे। वन्ध्या गर्भिणी हो जावे, स्नान करके मेरा दर्शन करे, स्तुति करे उसको इन्द्र के समान पुत्र होवे। ज्योतिर्मय लिंग रूप महादेव को भक्ति-पूर्वक पूजकर चतुर्दशी तथा अष्टमी को स्तोत्र से मेरी स्तुति करे और यथाशक्ति ब्राह्मणों को सुवर्ण दान करे और खिलावे जो यहाँ पर गंगा में ऐसा करेगा उसे सौ पुत्र पैदा होंगे।

दिति के गर्भ को इन्द्र ने ४९ टुकड़े कर दिये थे तब वे मरुत हुए। दिति बड़ी दुःखित हुई और पुत्र के लिए शिव का तप किया। शिवजी प्रसन्न हुए और वही स्थान पुत्रतीर्थ नाम से प्रसिद्ध हुआ।

शङ्करजी ने अपना लिङ्ग पुजवाने के लिए कैसा गप्प मारा है। जिन्हें पुत्र न होता हो वे जाकर इसकी परीक्षा करें। १०० नहीं तो २-४ तो हो ही जावेंगे।

वन्ध्या को पुत्र अ० ५५

गङ्गा के किनारे एक ओर कबूतर और दूसरी ओर एक उल्लू रहता था। दोनों में बराबर युद्ध होता रहता था। परन्तु किसी का जय न होता था। कपोत ने यम की और उल्लू ने अग्नि की आराधना की। दोनों ने दोनों को अस्त्र दिया परन्तु लड़ने पर भी किसी का विजय न होता था तो यम और अग्नि ने दोनों में सुलह करा दी और वरदान माँगने को कहा—उन्होंने वर माँगा कि दोनों तटों पर स्नान, दान, जप, पितृपूजन पुण्य तथा पाप जो कोई भी करे सबको अक्षय पुण्य मिले। यम ने कहा—गौतमी के उत्तर तट पर जो मेरा स्तोत्र पढ़ेगा उनके ७ वंश में कोई अकाल में नहीं मरेगा। अट्ठासी हजार बीमारियों से पीड़ित न होगा।

यहाँ स्नान करने से वन्ध्या को वीरसू शतायु सन्तान होगी। मन, वाणी, शरीर, से किये हुए सब पाप नाश हो जावेंगे।

पाठकों, इन तीर्थ बनानेवालों को यह न सूझा कि इस कथा पर विश्वास कौन करेगा क्या कबूतर और उल्लू यमाग्नि की उपासना करेंगे और याम्यास्त्र और अग्नि-अस्त्र लेकर लड़ेंगे। ऐसी मिथ्या कल्पना करनेवाले पुराणों को हमारे सनातनी पण्डित व्यासकृत मानते हैं। पण्डितों को चाहिए कि सब वन्ध्या स्त्रियों को वहाँ भेजकर लड़का पैदा करा डालें। बड़ी आमदनी होगी—

सब तीर्थ निर्माण कहाँ तक लिखें, ऐसे ही आगे अनेक तीर्थों के विषय में गप्प मारा है। जरा तीर्थ में वृद्धत्व का नाश, अप्सरा तीर्थ में वन्ध्या को पुत्र लिख मारा है। स्थाली पुलाक न्याय से आप लोग सब कथाओं का सार समझ लें। हिन्दू जनता में इतना अन्धविश्वास इन तीर्थों के सम्बन्ध में हो गया है कि लाख मना करने पर भी जाना नहीं छोड़ते। इन ब्राह्मणों ने तीर्थों की नवीन-नवीन रचना करके अपने भविष्य की सन्तान के साथ-साथ हिन्दू मात्रा को भी ले डूबे!

हरिजनों को मन्दिर प्रवेश में जो आजकल के धूर्त ब्राह्मण विरोध करते हैं और कहते हैं कि शिवजी नापाक हो जावेंगे। मन्दिर नापाक नहीं किन्तु उनकी मूर्त्ति सनातन धर्म के पूजनीय कैलासवासी भोले बाबा उनके स्पर्श मात्र से भ्रष्ट हो जावेंगे। ऐसे मूढ़ श्रीकरपात्रीजी के अन्ध अनुयायी सभी पैसे के दास ब्राह्मण पुराण की इस निम्न कथा को पढ़ लें—

भिल्लतीर्थ अ० ६६

वेद नाम का एक ब्राह्मण गौतमी के किनारे आदि केशव नामक लिङ्ग की पूजा किया करता था और एक भिल्ल जो शिव

का बड़ा भक्त था, जङ्गल में जाकर अपनी जीविका के निमित्त हिंसा करके माँस लाता था। वह प्रतिदिन बन से लौटकर गौतमी में स्नानकर, मुख में जल लेकर शिवलिङ्ग को स्नान कराकर माँस का नैवेद्य रख दिया करता था एक दिन वेद को यह देखकर कि फल मूल से की हुई पूजा सामग्री को हटाकर कोई माँस का नैवेद्य रखता है बड़ा ही क्रोध आया और उसे पकड़ने के लिए छिपकर बैठा। उसी समय व्याध आया। उसे देखकर शिव ने कहा कि बेटा तू इतनी देर तक कहाँ रहा, तेरे बिना हमें चैन न था। यह सुनकर वेद को बड़ा क्रोध आया। जब भिल्ल चला गया तो वह मन्दिर में जाकर शिव से बोला कि तुम भिल्ल पर प्रसन्न हो जो इतना पापिष्ठ है और इतनी सेवा करने पर भी मुझ पर न प्रसन्न हुए। मैं तुम पर पत्थर पटक दूँगा। शङ्कर ने कहा कि आज घर जा कल ऐसा करना। प्रातःकाल स्नान करके जब वह पूजा के लिए गया तो देखा कि लिङ्ग में व्रण है और उससे रक्त बह रहा है। उसने उसे धोकर पूजा की इतने ही में वह भिल्ल आया तो रक्तस्राव देखकर अधोर हो गया और बाणों से अपना शरीर छेद डाला तब शिव ने ब्राह्मण से कहा कि देख—तूने तो कुशादि से रक्त पोंछा था परन्तु इसने तो अपनी आत्मा ही अर्पण कर दिया।

गयातीर्थोत्पत्ति

वायुपुराण अ० ४४

असुरों में गयासुर महाबल और पराक्रम शाली था उसकी ऊँचाई १२५ योजन थी,* वह विष्णु भक्त था और उसकी मोटाई

* योजनानां सपादंच शतं तस्योच्छ्रयः स्मृतः ॥ ४४-४
स्थूलः षष्टिर्योजनानां श्रेष्ठोऽसौ वैष्णवः स्मृतः ५

६० योजन थी। कोलाहल पर्वत पर हजारों वर्ष तक श्वास रोककर दारुण तप किया। उसके तप से उद्विग्न होकर देव लोग ब्रह्मा के पास जाकर बोले। ब्रह्मा सबको लेकर शंकर के पास कैलास पर्वत पर गये और असुर से रक्षा करने के लिये प्रार्थना की। शङ्कर ने कहा कि क्षीर सागर में विष्णु के पास चलो वे ही हम लोगों का कल्याण करेंगे। सब लोग मिल कर विष्णु के पास गये और उनकी स्तुति की। स्तुति सुन कर विष्णु ने दर्शन दिया और पूछा कि आप लोग मेरे पास क्यों आये? उन लोगों ने कहा कि गयासुर के भय से आप हम लोगों की रक्षा कीजिये। विष्णु ने कहा कि आप लोग वहाँ चलें मैं भी वर देने के लिए आ रहा हूँ। वहाँ जाकर उससे पूछा कि तुम किस लिये तप कर रहे हो।

हम प्रसन्न हैं तुम वर मागो। गयासुर ने कहा कि मैं सर्व-देवों से, द्विजातियों से, ऋषियों से, अन्यय शिव से मंत्रों से योगियों से कर्मियों और सब धर्मियों से, ज्ञाति लोगों से भी अति पवित्र समझा जाऊँ। देव के साथ विष्णु ने उसे वरदान दिया और चले गये। पश्चात् तीनों लोक और यमपुरी शून्य हो गई। तब यम इन्द्रादि देवों के साथ ब्रह्मलोक को गये। यम ने ब्रह्मा से कहा कि आपने जो अधिकार दिया था गयासुर ने सब अधिकार लोप कर दिया। अपना काम आप सँभालिये। ब्रह्मादि सब देव-लोग विष्णु के पास गये और कहा कि आपके वरदान से सब पापी उसके दर्शन से स्वर्ग चले जाते हैं इसलिये तीनों लोक उनसे शून्य हो गया। विष्णु ने ब्रह्मा से कहा कि तुम लोग जाकर गया-सुर से यज्ञार्थ उसका शरीर मागो। ब्रह्मा देवों के साथ वहाँ गये। उसने उन्हें देखकर उनकी पूजा की और कहा कि आज मेरा जन्म सफल हुआ, आप जो कहें उसे करने को मैं तैयार हूँ। ब्रह्मा ने

कहा कि मैंने भ्रमण करते हुए जितने भी तीर्थों को देखा है वे सब ही यज्ञार्थ तुम्हारे शरीर से पवित्र नहीं हैं। तुम्हारा शरीर विष्णु की कृपा से सबसे पवित्र स्थान है। गयासुर ने कहा कि आज मेरा पितृवंश कृतार्थ हो गया आप मेरे शरीर को उत्पन्न किया और आप ही ने उसे पवित्र बनाया। सबके उपकार के लिये आप मेरे शरीर पर याग करें। ऐसा कह कर श्वेतकल्प में वह गयासुर भूमि पर लोट गया। कोलाहल गिरि पर नैऋति दिशा में उत्तर को शिर और दक्षिण में पैर फैला दिया। ब्रह्मा अग्निशर्मा अमृत शौनक याज्ञलि कुमुथि वेद कौडिन्य हारीत काश्यप कृप गर्ग-वसिष्ठ भार्गव पराशर कण्व माण्डव्य श्रुति केवल श्वेत सुताल दमन सुहोता कंक लौकाक्षि जैगीषव्य पंचमुख ऋषभ कर्क कात्या-यन गोभिल सुपालक गौतम वेद शिरोव्रत चाटुहास आत्रेय आंगि-रस उपमन्यु गोकर्ण शिखण्डी इत्यादि ब्राह्मणों को ऋत्विज बना कर याग करने लगे। अग्नि शर्मा ने मुख से गार्हपत्य आहवनीय दक्षिणाग्नि उत्पन्न किया। यज्ञ की प्रतिष्ठा के लिये ब्राह्मणों को दान दिया। ब्रह्मा ने पूर्णाहुति करके अवभृथ स्नान करके सुरों के साथ यज्ञयूप को स्थापन किया। ब्रह्मा ने यम से कहा कि शिला लाकर तुम दैत्य के शिर पर स्थापित कर दो ताकि यूप स्थिर रहे। शिला के रखने पर शिला के साथ वह असुर चलने लगा। ब्रह्मा घबड़ाये और क्षीरसागर में विष्णु के पास गये और कहा कि याग करने पर उसके मस्तक पर शिला रखने पर और उस पर रुद्रादि देवों के संस्थित होने पर भी हिलता है। अब शिला के स्थिर होने के लिये आप उपाय करें। ब्रह्मा के कहने पर अपने शरीर से मूर्ति निकाल कर ब्रह्मा को दिया। ब्रह्मा ने मूर्ति लाकर शिला पर स्थापित कर दिया तो भी स्थिर न हुआ तब फिर विष्णु को बुलाया और वे आकर शिला पर बैठ गये साथ ही स्वयं ब्रह्मा

पितामह फल्वीश केदार कनकेश्वर विनायक गणेश गयादित्य उत्तरार्क दक्षिणार्क इस तीन रूप से सूर्य्य, लक्ष्मी, गौरी, गायत्री, सावित्री, सरस्वती, इन्द्र, बृहस्पति, पूषा आठोवसु, विश्वेदेव दोनों अश्वीमारुत यक्ष उरग गन्धर्व सबके सब शिला पर स्थित हो गये आद्या गदा से वह दैत्य स्थिर किया गया। इसलिये आदि गदाधर नाम पड़ा।

तब गयासुर ने कहा कि हमारे साथ छल क्यों किया गया। मैंने यज्ञ के लिये अपना पवित्र शरीर दिया, क्या मैं विष्णु के कहने से स्थिर न हो जाता कि देवों ने तथा विष्णु ने गदा से मुझे पीड़ित किया यदि मुझे पीड़ा देकर ही देव लोग प्रसन्न होते हैं तो वे सर्वदा प्रसन्न रहें। गदाधरादि ने प्रसन्न होकर गयासुर से कहा कि तुम वर मागो उसने कहा कि जब तक पृथिवी सूर्य, चन्द्र रहें तब तक ब्रह्मा-विष्णु महेश्वर तथा सब देव इस शिला पर स्थिर रहें। और मेरे नाम से यह क्षेत्र रहे। पाँच क्रोश तक गया क्षेत्र एक क्रोश तक गया शिर हो उनके बीच में सब तीर्थ होवें। स्नान तपर्ण पिण्डदान से कुलों का उद्धार होवे आप लोग व्यक्त अव्यक्त शरीर से यहाँ ही रहें। जिनका यहाँ श्राद्ध हो वे ब्रह्मलोक को जावें। ब्रह्महत्या इत्यादि सब पाप छूट जावे।

देवों ने उसकी बात मान ली और वह निश्चल हो गया। इसके बाद ब्रह्मा ने ब्राह्मणों को दान दिया। घर बनवा कर सम्पूर्ण सामग्री के साथ ब्राह्मणों को दान कर दिया। कामधेनु कल्पवृक्ष, दूध बहनेवाली महानदी, घृतकुल्या सुवर्ण दीर्घिका तथा अन्न के अनेक पर्वत ये सब ही चीजें ब्रह्मा ने ब्राह्मणों को दीं और कहा कि तुम लोग अब किसी से न मागना। यह कह कर ब्रह्मा चले गये। पश्चात् ब्राह्मणों ने धर्मारण्य में धर्म से यज्ञ कराया उसमें लोभवश धन लिया तब ब्रह्मा ने आकर उन्हें शाप

दिया। दूध की नदी, पानी बहनेवाली हो जावे, घर मिट्टी के हो जावें कामधेनु कल्पवृक्ष मेरे लोक को चले जावें। यह शाप सुन कर ब्राह्मणों ने प्रार्थना की कि आपने जो दिया था वह तो आपके शाप से नष्ट हो गया अब जीवनयात्रा के लिये आप कृपा करें। ब्रह्मा ने कहा :—

तीर्थोपजीविका यूयं आचन्द्रार्कं भविष्यथ
लोका पुण्या गयायां ये श्राद्धिनो ब्रह्मलोकगाः
युष्मान्ये पूजयिष्यन्ति तैरहं पूजितः सदा
आक्रान्तं दैत्यजठरं धर्मेण विरजाद्रिणा
नाभिकूप समीपे तु देवी या विरजा स्थिताः
तत्रपिण्डादिकं कृत्वात्रिः सप्तकुलमुद्धरेत्।
महेन्द्र गिरिणा तस्य कृतौ पादौ सुनिश्चलौ
तत्र पिण्डादि कृत्सप्त कुलान्युद्धरतेनरः ॥ ८६

जब तक सूर्य चन्द्रमा रहेंगे तब तक तुम्हारी जीविका यही तीर्थ होगी। जो लोग गया में श्राद्ध करेंगे वे ब्रह्मलोक को जावेंगे। जो तुमको पूजेंगे वे मानो हमी को पूजेंगे। दैत्य के पेट को धर्म ने विरजाद्रि से ढक दिया नाभि कूप समीप में जो विरजा देवी है वहाँ पर पिण्ड देने से उसका २१ वंश तर जावेगा। महेन्द्र गिरि से उसका पैर निश्चल हुआ वहाँ पर पिण्डदि देने से ७ पीढ़ी तर जावेगा।

अब आगे वह शिला कौन थी इसका वर्णन सुनिये।

महा तेजस्वी सर्वविज्ञान में पारंगत कोई धर्म नाम का पुरुष था। उसकी पत्नी का नाम विश्वरूपा था। उससे धर्मव्रता नाम की कन्या उत्पन्न हुई। वह पति के किये तप करने लगी। १० हजार वर्ष तक उसने दुष्कर तप किया। ब्रह्मा के मानसपुत्र मरीचि पृथिवी पर पर्यटन करते हुये उस कन्या रत्न को देखा।

मरीचि ने पूछा कि तू कौन है क्यों तप कर रही है। तुमको देखकर मेरा मन मोह गया है। मैं ब्रह्मा का पुत्र हूँ। उसने भी अपना परिचय दिया। मरीचि ने कहा कि पतिव्रता के दर्शन के किये मैं पृथिवी पर घूम रहा हूँ। यदि तू पतिव्रता है तो मेरे साथ विवाह कर ले। लोक में तेरे समान कन्या और मेरे समान वर न मिलेगा। तू मेरे साथ विवाह कर ले। पिता की अनुमति से दोनों का विवाह हो गया। मरीचि से उसको १०० पुत्र हुए। एक बार मरीचि ने विश्राम किया और उसे पैर दबाने के लिए कहा। मुनि सो गये। उसी समय ब्रह्मा आ गये। उसने उठकर उनका स्वागत किया। वे शय्या पर लेटे।

उसी समय मरीचि जाग गये और पैर दबाते हुये न देखकर बड़े क्रुद्ध हुये और उसे शाप दिया कि तू शिला हो जा। उसने भी निरपराध शाप सुनकर मरीचि को शाप दिया कि शिव से तुमको शाप मिलेगा। दोनों तप करने लगे।

उनके तप से सन्तप्त इन्द्रादि देव हरिके पास गये। पतिव्रता और मुनि के तप से त्रैलोक्य की रक्षा करें ऐसा इन्द्र ने हरि से कहा। इन्द्र की बात सुनकर हरि धर्मव्रता के पास गये वह गार्हपत्य अग्नि में बैठकर तप कर रही थी उससे वर मागने को कहा। उसने कहा कि भर्त्ता के शाप से हमें मुक्त कीजिये। हरि ने कहा कि यह तो मेरी शक्ति के बाहर की बात है कोई दूसरा वर माग ले। उसने कहा कि यदि आप शाप से मुक्त नहीं कर सकते तो मैं ब्रह्माण्ड में पवित्र शिला बनूँ। देवादियों के लिये पवित्र नदी नद तालाब तीर्थ तथा त्रैलोक्य में जो व्यक्ताव्यक्त लिंग हैं वे सब तीर्थ रूप से मेरे अंग पर रहें। सब देवियाँ, सब मुनि ब्रह्मा विष्णु रुद्र आदि कोशभर में जो शिला है उसपर मूर्तिरूप से वास करें। सब लोग पाप नाशिनी शिला को देखकर और श्राद्ध करके ब्रह्मलोक के

अधिकारी हो जावें। काशी, प्रयाग, जगन्नाथ और गङ्गासागर सबके सब फल्गुनदी में रहें।

जरायुजाण्डजावापि स्वेदजावापि चोद्भिदः
त्यक्त्वा देहं शिलायां ते यान्तु विष्णु स्वरूपताम्

जरायुज पिण्डज स्वेदज उद्भिज्ज शिला पर शरीर त्यागने से विष्णु स्वरूप हो जावें।

उसे वरदान देकर सब देव लोग चले गये।

आदि गदाधर नाम कैसे पड़ा अ० ४७

गदा नाम का एक असुर था। दारुण तप करके ब्रह्मा से वरदान पाया था। प्रार्थना करने पर उसने अपनी अस्थि ब्रह्मा को दे दी। ब्रह्मा के कहने पर विश्वकर्मा ने उसकी एक गदा बना दी। हेति नामक एक ब्रह्मपुत्र राक्षस ने दिव्य सौ हजार वर्ष तक दारुण तप किया। ब्रह्मा से वर माँगा कि देव, दैत्य विविध शस्त्रास्त्र मनुष्य इत्यादि कृष्ण ईशानादि के चक्रों से मैं अवध्य हो जाऊँ। ब्रह्मा वर देकर चले गये। उसने इन्द्रादि देवों को जीत लिया और इन्द्र का राज्य छीन लिया तब ब्रह्मादि-देव विष्णु के शरण में गये। विष्णु ने कहा कि हेति देवासुरों से अवध्य है। हमें महास्त्र दो जिससे मैं हेति को मारूँ। ब्रह्मा ने वही गदा विष्णु को दे दिया। विष्णु ने उसे धारण कर हेति को मारा इसलिए गदाधर नाम पड़ा।

गदामादाववष्टभ्य गयासुरशिरः शिलाम्
निश्चलार्थं स्थितो यस्मात्तस्मादादिगदाधरः ॥

आदि में गदा का सहारा लेकर गयासुर के सिर पर शिला के निश्चल करने के लिए स्थित हुए। इससे आदि गदाधर नाम पड़ा—

गदाधर माहात्म्य अ० ४७

ये द्रक्ष्यन्ति सदा भक्त्या देवमादिगदाधरम्
कुष्ठरोगादिभिर्मुक्ता यास्यन्ति हरिमन्दिरम्
ते प्राप्स्यन्तिधनं धान्यं आयुरारोग्यमेव च
कलत्रपुत्रपौत्रादिगुणकीर्त्ति सुखानि च ।
गन्धदानेन गन्धाढ्यः सौभाग्यं पुष्पदानतः
धूप दानेन राज्याप्तिर्दीपाद्दीप्तिर्भविष्यति ॥ ४०
ध्वजदानात्पापहानिः यात्राकृद् ब्रह्मलोकभाक्
श्राद्धपिण्डप्रदोयस्तु विष्णुर्नेष्यतिवैपितॄन्
धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्मं अर्थार्थीचार्थमाप्नुयात्
कामानवाप्नुयात्कामी मोक्षार्थी मोक्षमाप्नुयात्
वन्ध्याचलभते पुत्रं वेदवेदाङ्ग पारगम्
राजा विजयमाप्नोति शूद्रश्च सुखमाप्नुयात्
पुत्रार्थीलभते पुत्रान् अभ्यर्च्यादिगदाधरम् ॥

अर्थ—जो भक्तिपूर्वक आदिगदाधर का दर्शन करेंगे वे कुष्ठादि रोगों से मुक्त होकर स्वर्ग जावेंगे, वे धन-धान्य, आयु-आरोग्य, स्त्री, पुत्र-पौत्रादि गुण कीर्त्ति सुख पावेंगे। गन्धदान से गन्धाढ्य, पुष्पदान से सौभाग्य, धूपदान से राज्य पावेंगे। ध्वज दान से पापहानि यात्रा करनेवाला ब्रह्मलोक को पावेगा। श्राद्ध पिण्ड देनेवाले के पितरों को बिष्णु ले जावेंगे। धर्मार्थी धर्म को धनार्थी धन को पावेगा। कामी की कामवासना तृप्त होगी, मोक्षार्थी मोक्ष पावेगा। वन्ध्या वेदवेदाङ्गपारग पुत्र पावेगी राजा विजय प्राप्त करेगा, शूद्र सुख पावेगा। पुत्रार्थी पुत्र पावेगा।

॥ समाप्त ॥

समालोचन

यह सर्वतन्त्र सिद्धान्त है कि जैसा जो कर्म करेगा वैसा उसे भोगना पड़ेगा। बिना भोग के कर्मक्षय नहीं होता। यह बात पुराण भी कहते हैं। वेद-शास्त्रों का यह अटल मत है ही। परन्तु एक ओर तो पुराण कहता है कि—अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्। दूसरी ओर यह भी कहता है कि स्थान विशेष में कर्म का भोग नहीं होता। यथा गया में पिण्डादि देने से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है ऐसा कथन सिवाय धूर्तों के कौन कह सकता है। पाठक विचार करें। गया की महत्ता दर्शाने के लिये जो आख्यायिका गढ़ी गई है वह सर्वथा असम्भव केवल अज्ञानियों को फँसाने के लिए लिखी गई है।

गयासुर के तप से देवताओं को उद्विग्न होने का कारण ही क्या है। अच्छे कर्म से तो वे ही चिढ़ते हैं जो नीच प्रकृति के लोग होते हैं। गयासुर के तप की तो प्रशंसा करनी चाहती थी पर प्रशंसा तो दूर रहे उससे द्वेष करके उसको नाश करने के लिए देव लोग दौड़-धूप करने लगे। ब्रह्मा और शङ्कर को लेकर क्षीरसागर में विष्णु के पास जाना सबसे भारी गप्प है। क्षीर-सागर का कहीं पता भी नहीं है। भागवत तथा अन्य कई पुराणों में इसी पृथ्वी पर घी-दुग्धादि के सात समुद्रों का वर्णन है। परन्तु इन पौराणिकों से कोई पूछे कि पृथ्वी पर क्षीरसागर कहाँ है जहाँ विष्णु जगत् का सब काम छोड़ लक्ष्मी को गोद में लेकर समुद्र में सोते हैं। ऐसी असत्य मनगढ़न्त आख्यायिका के बल पर गया की महत्ता दिखलाने का प्रयत्न किया गया है। पौराणिको, पहले आप लोगों को क्षीरसागर, इक्षुरससाग, घृतसागर का पता लगाना चाहिए यदि पता नहीं लगाते तो इस बीसवीं शताब्दी में

ऐसी मूर्खता की बात वही मानेगा जिसकी बाहर भीतर की दोनों आँख फूट गई हैं।

अच्छा इसे जाने दीजिए। विष्णु गयासुर के पास गये और उसे वर देकर वापस चले गये। उसकी पवित्रता से यमपुरी शून्य हो गई। यमराज को बड़ी चिन्ता हुई, दौड़े-दौड़े ब्रह्मा के पास गये ब्रह्मा के साथ फिर विष्णु के साथ क्षीरसागर पहुँचे। विष्णु ने कहा कि तुम जाकर उसका शरीर यज्ञार्थ मागो। यदि कहानी सत्य मानी जाय तो यह मानना पड़ेगा कि ब्रह्मा, बिष्णु तथा सभी देवताओं की नीयत ठीक न थी। सबके सब अच्छे कर्म में बिघ्न डालनेवाले बड़े ही धूर्त्त और कपटी थे। यमपुरी खाली हो गई तो बिगड़ा क्या ? जब गयासुर सबको मुक्ति देने लगा तो ये ब्रह्मादि देव उसके मारने की चिन्ता में क्यों दुर्बल होते जा रहे थे। यदि धर्मात्माओं की वृद्धि से जेल खाली हो जाय तो जेलर क्यों तोबातिल्ला मचाये ? पौराणिकों के देवता को कौन निष्पक्ष पुरुष भला कहेगा जो सदा दूसरे के उत्कर्ष से जला करते हैं। ऐसे ही देवताओं की पूजा करके हिन्दुओं ने उन्हीं अपने देवी-देवताओं के अवगुण को ग्रहण कर लिया है नीची जाति का कोई व्यक्ति अच्छा काम करता है, मन्दिर में दर्शन के लिए जाता है तो ये लम्बी नाकवाले उनसे जलते हैं, ये अवगुण उन्हीं कपटी देवताओं की पूजा से हिन्दुओं में आ गया है। जैसे देवता दूसरों के शुभकर्म से जलते हैं वैसे उनके भक्त भी—जैसे भूतनाथ वैसे प्रेतनाथ !

अब ब्रह्मा की धूर्तता देखिए। आप श्री मुख से गयासुर से कहते हैं कि हमने पृथिवी के सारे तीर्थों को देखा परन्तु तुम्हारे शरीर से पवित्र कोई नहीं पाया गया इसलिये अपना शरीर यज्ञार्थ में दे दो। क्या यह सरासर झूठ नहीं ?

क्या ब्रह्मा को काशी का माहात्म्य नहीं मालूम था ? क्या प्रयाग का माहात्म्य भूल गये थे ? असल बात तो यह है कि पुराणकार को तो गया क्षेत्र का उत्कर्ष दिखलाना था, ब्रह्मा बेचारे क्या करें उन्हें बीच में घसीट कर उन्हे धूर्त के पद पर बिठला दिया।

ब्रह्मा-विष्णु दोनों की नीयत खराब, वह भी निष्प्रयोजन, जो विष्णु का भक्त था उसी को मारने के लिए विष्णु ब्रह्मा को उपाय बतलाते हैं। विष्णु का यह कार्य कैसा जघन्य है, विष्णु के भक्त लोग विचार करें। ब्रह्मा सरासर झूठ बोल कर यज्ञार्थ शरीर माँगते हैं मनुष्य के शरीर पर आग जला कर यज्ञ करना क्या बर्बरता नहीं, धर्म है ? जगत्कर्ता के लिये यह काम अत्यन्त घृणा स्पद है परन्तु यह दोष इन पौराणिकों का है जिन्होंने ब्रह्मा को व्यर्थ ही बदनाम किया है।

बतलावें हमारे सनातनी भाई जो गया को मुक्ति का स्थान मान रहे हैं। शाबास उस असुर को, उसका हृदय कितना पवित्र था उसके उत्तर से प्रकट है। गयासुर का शरीर ५०० कोस लम्बा और २४० कोस मोटा था। वह अपना सिर उत्तर की ओर कोलाहल गिरि पर और पैर दक्षिण की ओर करके सो गया। पौराणिक ही बतलावें कि कोलाहल गिरि कहाँ पर है पर इसका उत्तर पौराणिक लोग देंगे नहीं, काल्पनिक पहाड़ का पता ही क्या लगेगा पर इतना तो अनुमान लगाना ही पड़ेगा कि गया में उसका शिर नहीं था। अब १००० मील लम्बाई का विभाग कीजिये तो शिर होगा ५०० मील उत्तर और पैर होगा ५०० मील दक्षिण अर्थात् हिमालय के पास शिर और रामेश्वर के पास या उसके इधर ही कहीं पैर। फिर ब्रह्मा ने उसके शिर पर

शिला रखा गया में, यह कैसा अनर्गल प्रलाप है भंग के तरंग में मिथ्या आख्यायिकादि कर लिखने का यही परिणाम है।

गयासुर तो आखिर मनुष्य ही था उसके शरीर पर अग्नि जला कर यज्ञ करना क्या मानवता अथवा देवतापन है। क्या भारत में और कोई स्थान पवित्र न था? क्या ब्रह्मा का कथन सोलहों आना गप्प नहीं है। ब्रह्मा ने झूठ बोल कर जो अनर्थ किया और कराया है, उससे वह कभी धूर्तता की उपाधि से वंचित नहीं रह सकता। यदि ब्रह्मा या विष्णु के शरीर पर आग जलाई जाती तो उन्हें ऐसा जघन्य कर्म करने या कराने का साहस ही नहीं होता। पर वास्तव में यह सब तो गप्प ही है। न कोई गयासुर था और न उसके शरीर पर हवन हुआ था। यह तो ब्राह्मणों की जाल है जो ऐसी अनर्गल अविश्वसनीय आख्यायिका लिखकर गया को तीर्थराज बनाने का प्रयत्न किया।

यूपको स्थिर रखने के लिए गया के मस्तक पर शिला रख दी पर तो भी वह असुर स्थिर न हुआ।

ब्रह्माजी बड़ी परेशानी में पड़ गये। बेचारे गया से दौड़े-दौड़े काल्पनिक क्षीर सागर में विष्णु की सहायता लेने गये। विष्णु भी अपने शरीर से मूर्ति निकाल कर ब्रह्मा को दिया और उसे शिला पर रखने के लिये कहा ब्रह्मा ने वैसे ही किया पर फिर भी स्थिर न हुआ। अब विष्णु भी छली की कोटि में आ गये पौराणिकों का ईश्वर ऐसा ही धूर्त और स्थानों पर कहा गया है। क्या विष्णु को यह मालूम न था कि मेरी मूर्ति के रखने से असुर स्थिर न होगा? यदि हाँ, तो विष्णु ने मूर्ति दी ही क्यों, ब्रह्मा को क्यों धोखा दिया उन्हें पुनः उनके पास जाने के लिए क्यों बाध्य किया। यदि कहो कि नहीं तो तुम्हारा विष्णु अल्पज्ञ ठहरा तुम उसे ईश्वर कैसे कहते हैं।

अब आगे चलिये—

ब्रह्मा पुनः दौड़े-दौड़े विष्णु के पास गये और उन्हें बुला लाये वे उस शिला पर जाकर बैठ गये अब और गप्प सुनिये। केवल विष्णु के बैठने से काम सिद्ध न हुआ उनके साथ ब्रह्मा तीन रूपों से सूर्य तथा सब ही देवता लोग बैठ गये विष्णु ने गदा से उसकी खूब मरम्मत की और शिला स्थिर हो गई इन पौराणिकों से पूछना चाहिये वह शिला कितनी बड़ी थी जिस पर ३३ कोट देव ब्रह्मा विष्णु सूर्य चन्द्र आठो वसु गन्धर्व सर्प आदि बैठे थे इतना भारी गप्प मारते उन्हें लज्जा भी न आई कि जब विद्वान लोग इस पर विचार करेंगे तो वह बालू की भीत कैसे टिकेगी। लोग हम लोगों को क्या कहेंगे जब कि पोल खुल जावेगी। वह शिला तो धर्मव्रता नाम की एक औरत का शरीर था जो मरीचि के शाप से शिला में परिणत हो गई थी। उसी औरत पर ये सब चढ़ बैठे कैसा गप्प मारा है। कौन बुद्धिमान इस पर विश्वास करेगा कि ३॥ हाथ की औरत के शरीर पर इतने देव कैसे बैठे हैं कोई जवाब। पृथिवी से १३ लाख गुना तो सूर्य ही कैसे बैठे, अब आठ वसुओं के नाम सुनिये—अग्नि, पृथिवी, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य, द्युलोक, चन्द्रमा, नक्षत्र जब पृथिवी के ऊपर गयासुर था तब उसपर पृथिवी कैसे चढ़ी? चन्द्रमा नक्षत्र आदित्य तथा द्युलोक कैसे चढ़े? ऐसा गप्प लिखते शरम भी न आई। इसी गप्प की बदौलत गयातीर्थ का निर्माण करने चले। समझा था कि भविष्य में सब मूर्ख ही होंगे और इस गप्प को मान लेंगे। मूर्ख हिन्दू तो मानते ही हैं। पौराणिको, यदि इस गप्प का तुम्हारे पास कोई उत्तर नहीं है तो गया श्राद्ध से मुक्ति का ढिंढोरा पीटना कौन बुद्धिमान मानेगा?

यह काल्पनिक गयासुर सरल स्वभाव का मनुष्य था उसे

मालूम न था कि सब देव लोग छल करेंगे अन्त में उसने कही दिया कि आप लोगों ने छल किया है। गदा से मार-मार कर मुझे कष्ट दिया है उसके इस कथन से ब्रह्मादि सब देवों तथा आख्यायिकाकार को चिल्लू भर पानी में डूब मरना चाहना था जो बनते हैं सृष्टिकर्त्ता पालनकर्त्ता ब्रह्मा पर कर्म करें महा नीच पुरुष जैसा।

आगे और गप्प सुनिये—

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि जब उसका सिर कुचल दिया गया, उसपर शिला रख दी गई और सभी देव लोग उस पर चढ़ गये और वह स्थिर हो गया तब फिर वह देवों को छली कहेगा ही किस मुँह से, क्योंकि वह तो दब कर मर गया तभी शिला स्थिर हुई। फिर उसके द्वारा देवों की शिकायत, विष्णु का वर मागने को कहना, फिर असुर द्वारा यह वर माँगना कि सूर्य-चन्द्र पर्यन्त ब्रह्मादि इस शिला पर स्थिर रहें। मेरे नाम से यह क्षेत्र रहे पाच कोच तक गया क्षेत्र एक कोस तक गया शिर हो, बीच में सब तीर्थ हों, जिनका महाश्राद्ध हो वह ब्रह्मलोक को जावें इत्यादि बातें कैसे मानी जा सकती हैं? इसे तो पौराणिकों ने अज्ञानी जनता को स्वर्ग के नाम ठगने के लिये जाल रचा है।

दुर्जन तोषन्याय से इसे मान भी लें तो गया शिर तो वहाँ था ही नहीं १००० मील लम्बे असुर का सिर तो कहीं हिमालय की तलहटी में रहा होगा फिर एक कोस तक गया शिर के रहने का विष्णु का वरदान असत्य ठहरा या नहीं? साथ ही जिस विष्णु को हमारे पौराणि ईश्वर मानते हैं, उस विष्णु ने पिण्डदान से ब्रह्मलोक प्राप्ति का वरदान कैसे दे दिया? क्या विष्णु को यह मालूम न था कि ब्रह्मलोक को ज्ञानी जन जाते हैं। चोर, बेइमान, कामी, कुकर्मी और परदाराभिमर्षक एक पिण्ड देने से ब्रह्म लोक

पा सकता है ? वास्तव में यह तो पौराणिकी लीला है। गया नाम तो गयनायक चन्द्रवंशीय राजा के नाम से पड़ा है परन्तु इन धूर्त पौराणिकों ने बिना परिश्रम धन प्राप्ति के निमित्त झूठी कहानी रच कर ब्रह्मादि देवों को बदनाम किया है।

अब ब्रह्मा और गयावालों का साठ गाँठ सुनिये। यज्ञ समाप्ति के बाद ब्रह्मा ने ब्राह्मणों को जो दान दिया (पृ० ४० देखो) उसे पाठक पढ़े ही होंगे और उनसे कह दिया कि अब तुम लोग दान न लेना। ब्रह्मा के चले जाने के बाद गयावालों ने दान लिया और ब्रह्मा ने आकर अपना दिया हुआ सब दान वापस ले लिया। जब गया वाले गिड़गिड़ाने लगे तो ब्रह्मा ने कहा कि अब तुम्हारी जीविका तीर्थ से होगी जो तुमको पूजेगें वे मानो हमी को पूजेंगे।

अब दान देकर वापस लेना क्या किसी धर्मशास्त्र की सम्मति हैं ? राजा नृग तो ब्राह्मणों को गोदान किया और दान की एक गाय दूसरे ब्राह्मण के गोल में चली गई जिससे राजा नृग को गिरगिटान का जन्म लेना पड़ा, भला ये ब्रह्माजी किस नरक में जावेंगे।

अब ब्रह्मा की धूर्तता देखो कि दिया दान वापस ले लिया और उनको यात्रियों का माल ठगने के लिए वरदान दे दिया और गया वालों की पूजा अपनी पूजा मान ली। आगे इनका वरदान भी कैसा असत्यपूर्ण है सुनिये :—

नाभिकूप के पास असुर का पेट और महेन्द्रगिरि पर उसका पैर है इसे ब्रह्मा स्वयं बतलाते हैं और वहाँ पिण्ड देने से उसका २१ वंश तर जावेगा। मालूम होता है ब्रह्मा भङ्ग के नशे में चूर था। उसने यह न सोचा कि असुर की नाभि गया में ही कैसे रहेगी और पैर महेन्द्र गिरि पर—यदि गया में यह पर्वत हो तो—कैसे

रहेगा। उसके सो जाने पर तो उसका पैर मद्रास में कहीं रहा होगा और पेट हिमालय तक चला गया होगा क्योंकि वह २४० कोस मोटा था।

फिर गया में इसको बतलाना और २१ पुश्त के तर जाने की बात कहना सिवाय अज्ञानता के और क्या है ?

क्या ब्रह्मा यह नहीं जानते थे कि—अवश्यमेवभोक्तव्यं कृतं-कर्म शुभाशुभम्।

वास्तव में यह सब पौराणिकी गप्प है। ब्रह्मा विष्णु शंकर आदि को इस आख्यायिका में लिख कर ब्राह्मणों ने अपने देवों की अपने स्वार्थ के लिये एक प्रकार से भर पेट निन्दा की है—

जो शिला गयासुर के सिर पर रखी गई थी वह कौन थी। इस पर भी एक आख्यायिका गप्प से भरी हुई लिखी गई है। शिष्ट लोगों ने मनुष्य की आयु सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलि में क्रमशः ४००, ३००, २००, १०० वर्ष मानी है थोड़ा घट-बढ़ भी जाया करती है पर १००० वर्ष तक तप करना लिख देना इस आख्यायिका का पहला गप्प है।

मूर्ख जनता पर मिथ्या प्रभाव डालने के लिये लिखा गया है। जैसे श्रीरामजी के सम्बन्ध में १० हजार वर्ष तक राज्य करने का गप्प लगाया गया है। पूर्वमीमांसा में १००० अब्द के सत्र पर बहस करते हुए जैमिनी ने अब्द का अर्थ दिन करके यह दिख-लाया है कि १००० वर्ष की आयु होना नितान्त असत्य है।

मरीचि के शाप से धर्मव्रता के पत्थर बन जाने का शाप तथा धर्मव्रता का आहवनीय अग्नि में बैठ कर तप करना दोनों बुद्धि विरुद्ध होने से अविश्वसनीय है अग्नि में बैठकर तप करने की बात को वही सत्य मानेगा, जिसकी बाहर और भीतर की दोनों आखें फूट गई हों, आखिर धर्मव्रता का अपराध ही क्या

था कि उसे मरीचि ने शाप दिया। उसने तो शिष्टाचार का पालन किया था, आखिर झूठ अनर्गलवाणी का शाप कहीं लग सकता है ? यह आख्यायिका शुरू से अन्त तक असंभवता से भरी केवल ब्राह्मणों का जाल है।

लोग कहेंगे कि गौतम के शाप से अहल्या प्रस्तर हो गई थी फिर इस कथा की बात गप्प कैसे ? यद्यपि अहल्या का प्रस्तर हो जाना भी आलंकारिक है हम आगे पौराणिक अलंकार में इसका प्रमाण देंगे परन्तु अहल्या तो जारकर्म के लिये दोषी थी उसको शाप देना गौतम को उचित था पर यहाँ तो निर्दोष स्त्री को शाप देने की बात कही गई है। इसलिये यहाँ पर पत्थर हो जाने की बात जो लिखी गई है सर्वथा मिथ्या है साथ ही यह भी विचारणीय है कि एक मनुष्य की साढ़े ३ हाथ की लाश पर ब्रह्मा विष्णु महेश सर्वदेव आठो वसु जिसमें पृथिवी भी शामिल है कैसे बैठे। इससे बढ़कर संसार में शायद ही कोई गप्प मिलेगा।

मरीचि और धर्मव्रता के तप से त्रैलोक्य का क्या विनाश होने वाला था कि इन्द्र दौड़े-दौड़े हरि के पास रक्षा के लिये गये ? ये दैत्य तो थे ही नहीं कि इन्द्र का राज्य हरण कर लेते। अतः यह भी गप्प ही है विष्णु के वर मागने के कहने पर जब उसने पति के शाप से मुक्ति माँगी तो विष्णु ने अपनी अशक्तता प्रगट की और अन्य वर मागने को कहा। क्या यह विष्णु ईश्वर था ? जो झूठी बात का समर्थन करता है क्या विष्णु को यह मालूम नहीं था कि शाप निर्मूल असत्य है ? कोई भी कह सकता है कि विष्णु मिथ्या का समर्थक और अशक्त था विष्णु और मरीचि दोनों अन्यायी। एक झूठा शाप देने वाला, दूसरा उसका समर्थन करने वाला। जो झूठा शाप देने वाले के शाप को दूर करने में भी समर्थ न हुआ पर आगे असम्भव बातों का वर देने

में समर्थ हो गया वह क्या ईश्वर हो सकता है, क्या आपके ईश्वर का ईश्वरता यही है कि एक साधारण सी बात के करने में अशक्त बन जाय, और बिना सोचे समझे उसे मनमाना असत्य वरदान देकर चला जाय।.

क्या वह मरीचिकी औरत कोस भर की थी जो शिला रूप में परिणत हुई थी? क्या उस पर ब्रह्मा विष्णु रुद्र मूर्तिरूप से अब रहते हैं? श्राद्ध के विश्वासी क्या कभी उस शिला पर तीनों को या किसी देवता को देखा है? क्या उस शिला को देख तथा वहाँ पर श्राद्ध कर ब्रह्मलोक का अधिकारी बन सकता है? विष्णु ने यह असत्य वरदान क्यों दिया? चोर डाकू बेइमान व्यभिचारी ब्रह्मलोक को जावेंगे तो नरक क्या भले आदमियों के लिये बना है? है कोई जवाब?

उसने वर मागा कि अण्डज पिण्डज स्वेदज उद्भिज्ज वहाँ शरीर त्याग से विष्णुरूप हो जावें विष्णु ने कहा एवमस्तु। वाह रे सनातनियों का पाखण्डी पौराणिक विष्णु, यहाँ पर खटमल मच्छर मुर्गा मुर्गी सूअर कुत्ता गोजर आदि सभी की विष्णु-स्वरूपता का वर देना कितना अनर्गल प्रलाप है? जो मनुष्यों के बनाये शास्त्रों की बात तक नहीं जानता वह है हमारे पौराणिकों का ईश्वर। बड़े तप त्याग ज्ञान से विष्णु स्वरूपता प्राप्त होती है पर यहाँ इन पौराणिकों ने वहाँ पर केवल पिंड पार देने से विष्णु के मुख से असंभव बात कहवाई है और अपने साथ अपने ईश्वर को भी ले डूबे हैं।

विष्णु का नाम आदि गदाधर कैसे पड़ा।

आप लोग आदि गदाधर की कथा पृ० ४३ में पढ़कर हमारी समालोचना पढ़ें।

पौराणिक विष्णु कोई शरीरधारी ईश्वर नहीं है। वेद और उपनिषद् इसका समर्थन नहीं करते। पौराणिकों ने विष्णु को कहीं ४ भुजा, कहीं ८ भुजा कहीं दश भुजा का उल्लेख किया है यथा:—

मेघ श्याम शरीरस्तु पीतवासा चतुर्भुजः।
शेषशायी जगन्नाथो वनमाला विभूषितः॥
दे० भा० ३-२-२३

यहाँ पर चार भुजा का वर्णन है।

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्व विघ्नोपशान्तये॥

यहाँ पर भी ४ भुजाका वर्णन है—

प्रथम श्लोक में मेघ के समान श्याम वर्ण, दूसरे श्लोक में चन्द्रमा के समान उज्ज्वल वर्ण!

दशबाहुर्महातेजाः देवतारिनिषूदनः।
श्रीवत्सांको हृषीकेशः सर्वदैवतपूजितः॥
महा० भीष्मपर्व अनु—१४७

यहाँ पर दश भुजा का वर्णन है।

कृतपादः सुपर्णांशे प्रलम्बाष्टमहाभुजः।
चक्रशंखासिचर्मेषुधनुःपाणि गदाधरः॥

यहाँ पर आठ भुजा का वर्णन है—

एक ही शरीरी व्यक्ति के श्याम और शुक्ल दो रूप नहीं हो सकते तथा न ४ ८ १० भुजायें हो सकती हैं परन्तु शरीरधारी विष्णु के २ रूप का तथा ४, ८ १० भुजाओं का वर्णन है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यह सब कल्पना मात्र है विष्णु निराकार ही है—

अब आगे चलिये।

उक्त श्लोक में गदाधर नाम आया है वह इसलिये कि उसके एक हाथ में गदा है। परन्तु इसकी निरुक्ति के लिये एक कथा बना डाली।

यहाँ के प्रस्तुत विषय में विष्णु का नाम गदाधर क्यों पड़ा पुराणकार ने एक काल्पनिक कहानी देकर विष्णु का नाम गदाधर रख दिया परन्तु वह भी बेतुका और विष्णु को पराधीन बना कर। आख्यायिका में गदा नामक एक असुर की कल्पना की गई है। ब्रह्मा ने उसकी अस्थि माग ली और विश्वकर्मा से उसकी एक गदा बनवाई। किसलिये, हेति नामक एक असुर को मारने के लिए जिसे ब्रह्मा ने वरदान दिया था कि वह दैत्य देव विविध शस्त्रास्त्र मनुष्य कृष्ण और ईशानादि के चक्र से न मारा जा सके। उसने वर पाकर इन्द्र का राज्य छीन लिया वे विष्णु के पास गये। विष्णु ने अपनी असमर्थता प्रकट की और देवों से महास्त्र मागा। ब्रह्मा ने गदासुर की अस्थि से बनी गदा दे दी जिससे वह मारा गया। और विष्णु का नाम गदाधर पड़ा। यहाँ भी विष्णु की असमर्थता दिखला कर विष्णु को एक साधारण व्यक्ति बना दिया गया। यह सब पौराणिकी लीला है। न कोई गदासुर था, न कोई हेति था, गदाधर का निर्वचन करने के लिये पौराणिकों ने इस गल्प की रचना की।

अब आदि गदाधर नाम की निरक्ति देखिये—आदि में गदा का सहारा लेकर गयासुर के शिर पर स्थित शिला के निश्चल करने के लिये उसपर बैठे इसलिये आदि गदाधर नाम पड़ गया—

इन पौराणिकों से पूछना चाहिये कि यह बातें तुम्हें कैसे

मालूम हुई ? यदि कहें कि व्यासजी ने बतलाया, प्रश्न फिर वही कि व्यास को कैसे मालूम हुआ। वे त्रिकालदर्शी ईश्वर तो थे नहीं। इसलिये पुराणकार ने गया तीर्थ के निर्माणार्थ एक गप्प मारा है जिसे हमारी समालोचना से पाठक समझ गये होंगे।

आदि गदाधर के दर्शन से जो फल माहात्म्य में दिखलाये गये हैं (पढ़िये पृ० ४४) यदि सत्य है तो गया में कोई पुत्रहीन, दरिद्र रोगी कुष्ठ रोगी सौभाग्य हीन न होना चाहिये था, न पंडों को यजमानों से दान मागने की आवश्यकता पड़ती क्योंकि वे प्रतिदिन दर्शन करते हैं जिन राजाओं के राज्य चले गये वे राज्य पा जावें, वन्ध्या पुत्र वेद वेदाङ्ग पारग पुत्र पा जाय दूसरे लोग दर्शन करके पुत्र धन पा जावें तब तो माहात्म्य ठीक नहीं तो सब ही गपोड़ा। जब इस लोक की बात सब ठीक निकल आवे तब श्राद्ध में ब्रह्मलोक गमन की बात करें।

वहाँ के वकीलों को वकीली, डाक्टरों को डाक्टरी बनियों को रोजगार छोड़कर आदिगदाधर से सब धनादि लेना चाहिये वे न दें तो इन पौराणिकों का मत्था फोड़ देना चाहिये कि तुम लोग ऐसा मिथ्या प्रचार कर हमलोगों को क्यों ठगा ?

एक ओर गया का इतना महात्म्य गाया गया। दूसरी ओर भागवत की कथा इस माहात्म्य पर पानी फेर देती है। कथा का सार इस प्रकार है।

गोकर्ण और धुन्धकारी दो भाई थे। गोकर्ण तीर्थ यात्रा में गये। इधर धुन्धकारी वेश्या के चंगुल में फँसकर पिता की सब सम्पत्ति फूँक डाली। माता-पिता शोकग्रस्त होकर मर गये। अब धुन्धकारी स्वतन्त्र बन कर वेश्या के ही घर रहने लगा। जब सब धन क्षीण हो गया तो वेश्या ने उसे किसी प्रकार मार डाला। वह प्रेत हुआ। जब गोकर्ण घर आये तो उन्हें सब बातें मालूम

हुईं। वे धुन्धकारी को गया बैठा आये। धुन्धकारी कभी मेष कभी भैंसा कभी सर्प बनकर गोकर्ण के सामने प्रगट होने लगा। पूछने पर बतलाया कि मैं तुम्हारा भाई धुन्धकारी हूँ तब गोकर्ण ने कहा:—

त्वदर्थं तु गयापिण्डो मया दत्तो विधानतः।
तत्कथं नैव मुक्तोसि ममाश्चर्यमिदं महत्॥
गया श्[illegible]मुक्तिश्चे दुपाय[illegible]स्त्विह॥

प्रेत बोला

गया श्राद्धशतेनापि मुक्तिर्न मे भविष्यति॥
उपायमपरं किंचित् तद् विचारय साम्प्रतम्।

मैंने विधिपूर्वक गया में तुम्हें पिण्डदान दिया परन्तु तुम्हारी मुक्ति न हुई। यह मेरे लिये बहुत आश्चर्य्यजनक बात है। यदि गया श्राद्ध से मुक्ति न हुई तो फिर तुम्हारी मुक्ति के लिये और कोई उपाय नहीं है। तब प्रेत ने कहा कि सैकड़ों गया श्राद्ध करने से भी मेरी मुक्ति न होगी। अब मेरी मुक्ति के लिये कोई दूसरा उपाय सोचिये।

अब पाठक वृन्द इस कथानक से आपके ध्यान में यह बात आ गई होगी गया का माहात्म्य जो पहले गाया गया है वह सब इस भागवत की कथा से कट गई। अतः पुराण के अनुसार भी गया माहात्म्य केवल अज्ञानी जनता से पैसा ठगने का एक प्रशस्त मार्ग बना दिया गया है।

संसार में जितनी भी लड़ाइयाँ, झगड़े मारकाट पाखण्ड, चाहे वह धार्मिक हों, चाहे आर्थिक चाहे राजनीतिक हों, वे सबके सब स्वार्थ के कारण ही होते हैं। अपने स्वार्थ के लिये ही ऊँच-

नीच की सृष्टि, उसी के लिये गरीबों का शोषण उसी के लिये धर्म राज्य में अनेक प्रकार के पाखण्ड रचे गये हैं। पुराण स्वयं ही कहता है कि ब्राह्मणाः स्वोदरार्थं वैपाखण्डानि पृथक्-पृथक्। प्रवर्तयन्ति कलिना प्रेरिता मन्दचेत सः॥ ब्राह्मणों ने अपने पेट पालन के लिये कलि से प्रेरित होकर पृथक्-पृथक् अनेक पाखण्ड रचे हैं। काशी की महिमा गाने लगे तो सब से बढ़कर काशी को लिख मारा, प्रयाग की महिमा दिखला कर प्रयाग को तीर्थराज बना डाला इस प्रकार [illegible] इन्होंने सैकड़ों क्या सह[illegible] तीर्थ बना डाले। मृतकों को [illegible] पहुँचाने के लिये पिण्[illegible]। ऐसा माहात्म्य गाया कि सारा हिन्दू समाज पापियों को [illegible]र्ग में भेजने के लिये लाखों रुपये खर्च करने लगा। यह सोचा नहीं कि जिस धर्म में कर्म ही स्वर्ग नरक ले जाने वाला माना गया है उसी धर्म में स्थान विशेष में बिना किसी कर्म के पिण्डदान देने से पापी से पापी स्वर्ग में कैसे चला जाता है। हमारी गरुड़ पुराण समालोचना पढ़ेंगे तो सब भेद खुल जावेगा।

गया को स्वर्ग की निशेनी बनाने के लिए इन्होंने ऐसी ऐसी अनर्गल असम्भव आख्यायिकायें लिख कर ब्रह्मा, विष्णु, शङ्कर तथा सम्पूर्ण देवों की ऐसी खिल्ली उड़ाई है जिसे अन्य धर्मी पढ़ कर देवों की निन्दा करने से कदापि न चूकेंगे। इसीलिये मैंने गया तीर्थ निर्माण की समालोचना की है। ब्रह्मादि देवों की निन्दा करना मेरा अभिप्राय नहीं हम भी उन्हें मानते हैं। परन्तु पेट पूजा के बहाने देवताओं की निन्दा हम सत्य नहीं मानते इसीलिये उन देवों की समालोचना करके यह दिखने का प्रयत्न किया है कि सारा-का-सारा लेख अपने स्वार्थ के लिये लिख कर देवताओं को एक प्रकार से बदनाम किया गया है। पाठकवृन्द गया कैसे तीर्थ बना इसका रहस्य जानना चाहें तो हमारी लिखी श्राद्ध मीमांसा पढ़ें।

इतना वक्तव्य देकर हम इस लेख को समाप्त करते हैं। पाठक इसे पढ़ कर देखेंगे कि किस प्रकार इन पौराणिकों ने अपने स्वार्थवश गया तीर्थ का निर्माण किया है। हिन्दू समाज अब पिण्डदान को स्वर्ग की सीढ़ी समझकर मूर्ख व्यसनी, धूर्त पण्डों को लाखों रुपये का भेंट चढ़ाती है जिसके बल पर मूर्ख पण्डे अनेक व्यसनों में लिप्त होकर धर्म का नाश कर रहे हैं। मैंने जनता के सामने इसलिये रखा है कि वे निष्पक्ष भाव से इसे पढ़ कर ब्राह्मणों के [redacted] से विरक्त हो जावें।

*** समाप्त ***

आवश्यक सूचना

ौराणिक श्राद्धमीमांसा नामक पुस्तक छपने जा रही है में गरुडपुराण की समालोचना करके वर्तमान पौराणिक का खण्डन किया गया है। साथ ही जिन वैदिक मन्त्रों के ार से ये पौराणिक गरुडपुराणोक्त श्राद्ध वैदिक बतलाने की करते हैं उसका निराकरण पुष्ट प्रमाणों द्वारा किया गया है।

रविबाबू रचित

ोरा (उच्चकोटि का उपन्यास) ३) आँख की किरकिरी

नाव दुर्घटना ४।।) मुसाफिर (यात्रा-विवरण)

शरतबाबू लिखित

शेष प्रश्न ४) शेष का परिचय (सविता)

चरित्रहीन २) देहाती समाज

मझली दीदी २) देवदास

अन्य पुस्तकें

मायावी संसार २) कपाल कुंडला (बंकिमबाबू)

आग की लपटें २) उच्छृङ्खल (निरुपमा देवी)

भक्ति और वेदान्त (स्वा० विवेकानन्द)

धार्मिक पुस्तकें

न्याय दर्शन	२।।)	वैदिक संध्या
सांख्य दर्शन	२)	धर्मशिक्षा
वेदान्त दर्शन	३)	आर्य वैदिक सत्सङ्ग
वैशेषिक दर्शन	३।।)	आर्याभिनय
उपनिषद् प्रकाश	४)	दैनिक यज्ञ प्रकाश
मनुस्मृति	५)	वैदिक लोक व्यवहार
सत्यार्थ प्रकाश	१।।)	प्रगतिशील विचार
संस्कार विधि	।।।≈)	ब्रह्मचर्य साधन
कर्त्तव्यदर्पण	१।)	मांसाहार घोर पाप
क्ति-दर्पण	१।।)	आर्य सभ्यता
श्रीमद् दयानन्द प्रकाश	५)	कौटिल्य अर्थशास्त्र
तिलक गीता रहस्य	१२)	ऋगवेद भाष्य भूमिका
व्यवहार भानु	।)	सामवेद १ खण्ड
सूरसागर	१२)	यजुर्वेद २ खण्ड
लाला लाजपतराय	[illegible]।।)	अथर्ववेद ४ खण्ड
प्राचीन सत्यनारायण कथा	।)	ऋगवेद ७ खण्ड
प्रजापालन	−)	

पुस्तक प्रकाशक तथा विक्रेता—

वैदिक पुस्तकालय,

[illegible]

सन्दर्भ पु
पु परिग्रहण क्रमांक 2865
दयानन्द महिला महाविद्यालय, कुरुक्षेत्र